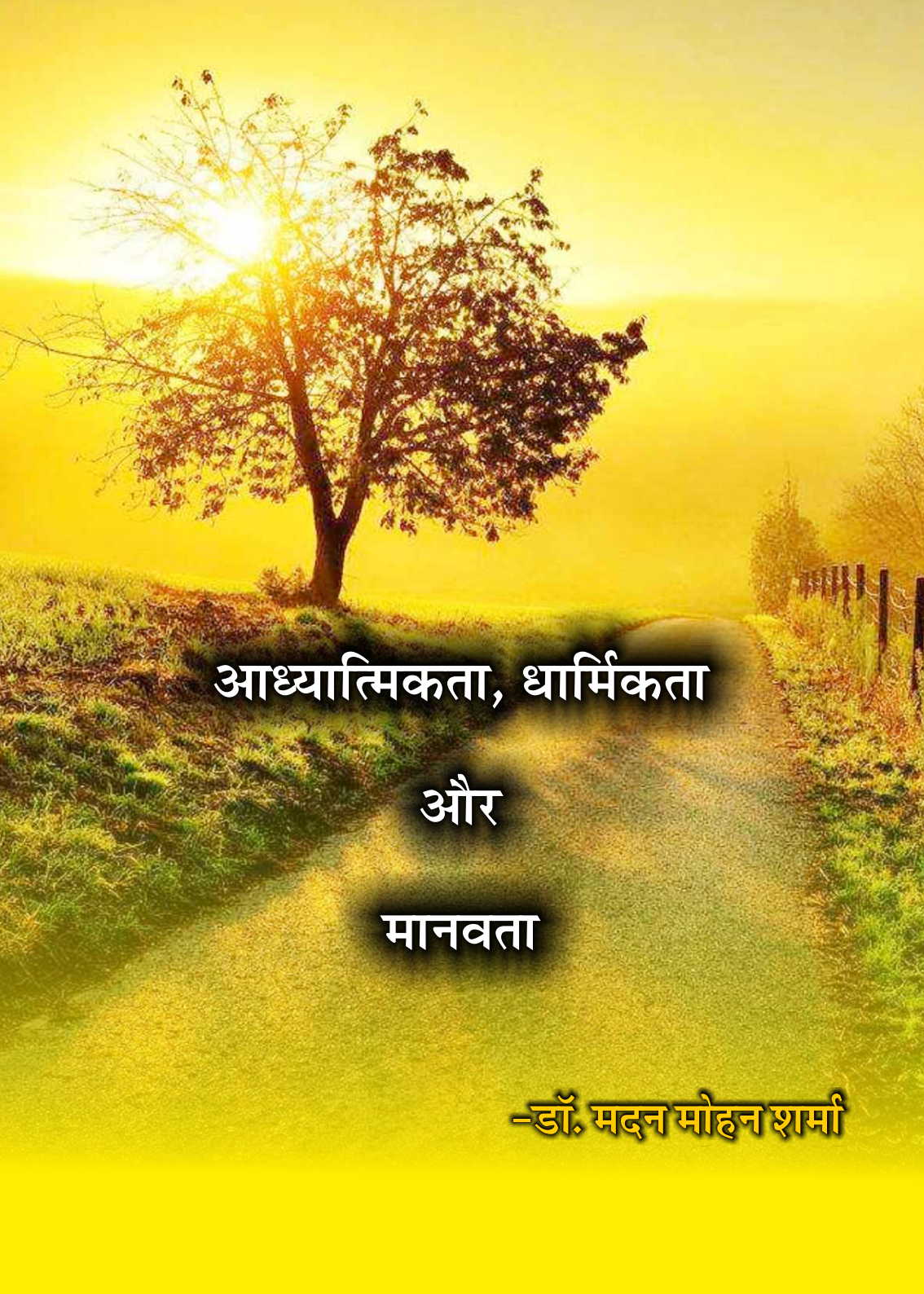

आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता

-डॉ. मदन मोहन शर्मा

मानवता व्यवहारिक अनुसंधान के उपरांत प्रस्तुत शोध प्रबंध

अनुसंधान का विषय- आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता

शोधार्थी का नाम : डॉ. मदन मोहन शर्मा

पंजीयन संख्या : HR / 369 / 75

दिनांक : 20/10/2023

शोधार्थी का पता : मथुरा, उत्तर प्रदेश, पिन - 281406

मार्गदर्शक : डॉ. अभिषेक कुमार जी

दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केन्द्र

DIVYA PRERAK KAHANIYAN HUMANITY RESERCH CENTRE

An ISO 21001 - 2018 Certified Reserch 33 Institution

Regd - Under Indian Trust Act 1882 Government India

पंजीकृत कार्यालय : ठेकमा, जिला- आजमगढ़ , उत्तर प्रदेश (भारत)

शोधार्थी घोषणा पत्र

मैं डॉ. मदन मोहन शर्मा (शोधार्थी दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केंद्र) घोषणा करता हूँ कि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध (आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता) जो व्यवहारिक अनुसंधान का मूल भाग है तथा अप्रकाशित है। इस शोध प्रबन्ध को मैंने डॉ. अभिषेक कुमार जी के मार्गदर्शन में पूरा किया है। मैं यह घोषणा करता हूँ कि शोध कार्य पूरी निष्ठा एवं ईमानदारी के साथ किया गया है तथा इससे पहले किसी डिग्री डिप्लोमा के लिए उपयोग नहीं किया गया है। मैं यह भी घोषणा करता हूँ कि मैंने अपना अनुसंधान कार्य 'दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केंद्र' के तत्वाधान में सभी नियम व निर्देशानुसार पूर्ण किया है।

दिनांक : 10/05/2024

शोधार्थी हस्ताक्षर
डॉ.मदन मोहन शर्मा

मार्गदर्शक घोषणा पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि 'दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केंद्र' के अंतर्गत 'आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता' विषय पर शोधार्थी श्री डॉ. मदन मोहन शर्मा द्वारा किया गया प्रस्तुत अनुसंधान मूल व अप्रकाशित भाग है। इनके द्वारा मेरे मार्गदर्शन में यह शोध कार्य किया गया है एवं शोध प्रबन्ध चोरी रहित, बहुत ही उत्कृष्ठ है तथा शोध प्रकाशन के लिए उपयुक्त है।

वर्तमान में यह अनुसंधान कार्य समाज को सही दिशा दिखाने एवं चलने के लिए प्रेरित करेगा तथा मानसिक और बौद्धिक विकास कर सकारात्मक ऊर्जा का संचार करेगा। इस तरह का अनुसंधान कार्य, अनुसंधान कर्ता की कार्य कुशलता व सच्ची निष्ठा एवं मानवता के प्रति समर्पण और प्रेम को दर्शाता है।

यह भी प्रमाणित किया जाता है कि शोधार्थी ने अपना अनुसंधान कार्य 'दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केंद्र' के तत्वाधान में नियम व निर्देशानुसार पूर्ण किया है।

दिनांक : 10/05/2024

मार्गदर्शक के हस्ताक्षर
डॉ. अभिषेक कुमार

आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता

दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केंद्र

शोध प्रबन्ध

शोधार्थी- डॉ.मदन मोहन शर्मा

पंजीयन संख्या

HR /369/75, 20/10/2023

प्रेरक :

डॉ. नानकदास जी महाराज एवं डॉ. अभिषेक कुमार जी

दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केंद्र

‘कृतिम आनन्द के पीछे मत दौड़ो,
वास्तविक आनन्द की खोज करो’

विशेष

मैं 'कर भला तो हो भला' में विश्वास रखता हूँ। इसी को ध्यान में रखते हुए मैं अपने साहित्य की रचना करता हूँ।

जिस साहित्य से :-

1. किसी को प्रेरणा न मिले।
2. दिशा न मिले।
3. उसको ऊर्जा न दे सके।
4. उसको उत्साहित न कर सके।
5. उसको उसकी मंजिल तक पहुंचाने में सहयोग न करे।

ऐसे साहित्य की रचना करना, कोरे कागज एवं स्याही और अपने अनमोल समय को बरबाद करना है।

अपनी सामर्थ्य एवं ज्ञान के अनुसार मैंने 'आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता' विषय पर अपने विचारों को प्रकट किया है।

जिसमें :-

1. सामाजिक।
2. आध्यात्मिक।
3. भौतिक।
4. एवं शैक्षिक।

आदि बिन्दुओं पर प्रकाश डाला गया है, क्योंकि यही बिन्दु हमारे समाज की एवं हमारी जड़ें हैं। इन बिन्दुओं पर ही हम अपना जीवन जीने का प्रयास करते हैं।

भवदीय

डॉ.मदन मोहन शर्मा

आभार

मैं अपने पाठकगणों का आभार व्यक्त करने से पहले, अपने शोध विषय 'आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता' में किसी भी त्रुटि के लिए क्षमा प्रार्थी हूं। क्योंकि इंसान गलतियों का पुतला है और मैं उन्हीं इंसानों में से एक हूं। ये मेरा सौभाग्य है कि मुझे इस विषय पर लिखने का अवसर मिला है।

इसमें किसी भी त्रुटि के लिए मैं स्वयं जिम्मेदार हूं। जो पाठकगण इसे जीवन में उतारने का प्रयास करेंगे, मैं उन सभी पाठकगणों का सहृदय आभार प्रकट करता हूं।

इस शोध में आंशिक सहयोग गूगल द्वारा भी लिया गया है, जैसे कि कुछ महापुरुषों के विचार एवं तर्क।

धन्यवाद!

भवदीय
डॉ. मदन मोहन शर्मा

विषय सूची

1.	:	माता-पिता ।
2.	:	गुरू।
3.	:	माता-पिता, गुरू।
4.	:	ईश्वर ।
5.	:	आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता में समन्वय।
6.	:	महापुरुषों के मार्गदर्शन की महत्वता ।
7.	:	प्रभु प्रेम।
8.	:	शब्दों का चक्रव्यूह ।
9.	:	अनुसंधान।
10.	:	अनुसंधान की आवश्यकता।
11.	:	शोध प्रबन्ध के मुख्य घटक।
12.	:	संदर्भ।
13.	:	अध्यात्म।
14.	:	धर्म।
15.	:	मानवता।
16.	:	आध्यात्मिकता और धार्मिकता में अन्तर।
17.	:	आध्यात्मिकता और मानवता में अन्तर।
18.	:	धार्मिकता और मानवता में अन्तर।

19. : मानव जीवन में पथप्रदर्शक की भूमिका ।

20. : आध्यात्मिक प्रकाश स्तम्भ आदि गुरू शंकराचार्य-चेतनादित्य आलोक

21. : तार्किक विश्लेषण।

22. : धार्मिक और आध्यात्मिक गुरुओं के तर्कों का आकलन।

23. : आध्यात्म के मूल को समझने का प्रयास।

24. : मानव जीवन पर दुर्व्यसनों का प्रभाव।

25. : आध्यात्म, धर्म और मानवता का उद्देश्य।

26. : भाषा शैली।

27. : स्वाभिमत।

28. : शोध सार।

माता-पिता

पद्म पुराण सृष्टि खंड (47/11) से

सर्व तीर्थमयी माता सर्व देवमयःपिता।
मातरं पितरं तस्मात् सर्व यत्नेन पूजयेत।।

अर्थात् माता सर्व तीर्थ मयी और पिता सम्पूर्ण देवताओं का स्वरूप है, इसलिये सभी प्रकार से यत्न पूर्वक माता-पिता का पूजन करना चाहिए। जो माता-पिता की प्रदक्षिणा करता है, उसके द्वारा सातों दीपों से युक्त पृथ्वी की परिक्रमा हो जाती है। माता-पिता अपनी संतान के लिए जो दुःख व पीड़ा सहन करते हैं, उसके बदले पुत्र यदि सौ वर्ष माता-पिता की सेवा करे, तब भी वह इनका ऋण नहीं चुका सकता।

।। मात-पित वन्दना ।।

वन्दना माता-पिता की ,नित्य तुम करते रहो।
मानकर ईश्वर इन्हें, चरणों में झुकते रहो ।।

माता-पिता की सेवा बिन ,संसार जीता भी तो क्या,
है जीतकर भी हारा तू, संसार जीता भी तो क्या,
आदेश का माता-पिता के, पालन तुम करते रहो।
मानकर ईश्वर इन्हें .....।।

माता-पिता प्रथम गुरू, ये मानता संसार है,
रूप ईश्वर का हैं दोनों, जानता संसार है,
भवसागर से तर जाओगे, गुणगान तुम करते रहो।
मानकर ईश्वर इन्हें .....।।

गुरु

प्राचीन काल से ही गुरू मनुष्य के मार्गदर्शक रहे हैं। गुरू मनुष्य के जीवन से अंधकार हटाकर उसके जीवन में प्रकाश लाने का प्रयास करते हैं। मनुष्य के अज्ञान रूपी अंधकार को ज्ञान रूपी प्रकाश में बदलना एवं मोक्ष के द्वार तक पहुंचाना, ये कार्य गुरू ही कर सकते हैं।

।। गुरू वन्दना ।।

गुरुजी मोहे, तुम ही करोगे पार।
मैं मूरख, दीन, हीन और हूं निपट गवार।।
ज्ञान, ध्यान, न मैं, जानुं कछु भी,
रोऊं, कभी मैं, और हंसु भी,
मैं पापी, अज्ञानी और तुम, ज्ञान के हो भंडार।
गुरूजी मोहे..... ।।
मैं सेवक बन, जाऊं तिहारा,
तुम जो गुरूजी,करो इशारा,
मेरी नैया के बन जाओ, तुम ही खेवनहार।
गुरूजी मोहे..... ।।
लख चौरासी, काटो मोरी,
तुमसे विनती,है ये मोरी,
'नाम' का अमृतपान कराके, करो मेरा उद्धार।
गुरूजी मोहे..... ।।
तुम पूनम के चांद गुरूजी ,
'मदन' है काली रात गुरूजी,
तन, मन, धन, ये सारा मेरा, है तुमपे बलिहार।
गुरूजी मोहे..... ।।

।। गुरू का महत्त्व ।।

गुरू अपने शिष्यों के मानसिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उन्हें नई सोच एवं दृष्टि प्रदान करते हैं। एक अच्छे गुरू का महत्वपूर्ण कार्य होता है, समाज को बौद्धिक शिक्षा प्रदान कर राष्ट्रीय निर्माण करना एवं भगवद् प्राप्ति कराना ।

गुरूर ब्रह्मा, गुरूर विष्णु, गुरूर देवो महेश्वरः ।

गुरूर साक्षात परब्रह्म, तस्मै श्री गुरूवे नमः ।।

अर्थात् गुरू ही ब्रह्मा है, गुरू ही विष्णु है, गुरू ही शिव है, गुरू ही साक्षात् परब्रह्म है, ऐसे गुरू को मैं प्रणाम करता हूं।

ध्यान मूलं गुरू मूर्तिः,पूजा मूलं गुरू पदम ।

मंत्रमूलं गुरूर वाक्यं,मोक्ष मूलं गुरूकृपा ।।

गुरू की मूर्ति का ध्यान ही सब ध्यानों का ध्यान है, गुरू के चरण कमल की पूजा ही सब पूजाओं का मूल है, गुरू के द्वारा कहा गया वाक्य ही सब मंत्रों का मूल है और गुरू कृपा ही मुक्ति का साधन है।

गुरू गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागुं पांय ।

बलिहारी गुरू आपने, गोविन्द दियो बताय ।।

-संत कबीरदास जी

संत कबीर साहब इस पद्य के माध्यम से कहते हैं कि यदि परमात्मा और गुरू एक साथ मिल जाएं तो, पहले मैं गुरू को प्रणाम करूंगा फिर परमात्मा को। क्योंकि गुरू ने ही ईश्वर अर्थात् परमात्मा को जानने का मार्ग प्रशस्त किया है।

कण-कण में वो रम रहा, मूरख तू पहचान ।

गुरू बिना नहीं पाएगा, प्यारे तू भगवान ।।

कहने का तात्पर्य यह है कि गुरू के बिना मनुष्य मूर्खों की श्रेणी में आता है, इसलिए कण-कण में विद्यमान भगवान को वह पहचान नहीं पाता है। उपरोक्त पंक्तियों में स्पष्ट कहा है कि हे मनुष्य तू बिना गुरू के ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकता। ईश्वर को प्राप्त करने का गुरू ही एकमात्र रास्ता है।

पंछी पिंजरा तोड़ के,उड़ जाए इक रोज ।

गुरू की शरणै जाय के,कर तू सत की खोज ।।

अर्थात् हे मनुष्य तेरे शरीर रूपी पिंजरे को तोड़कर, आत्मा रूपी पंछी एक दिन उड़ जायेगा। इसलिए तू गुरू की शरण में जाकर ईश्वर रूपी सत्य की खोज कर, अन्यथा यह जीवन व्यर्थ ही चला जायेगा।

माता, पिता, गुरु

प्राचीन काल से ही हमारी संस्कृति एवं महापुरुषों ने हमें बताया है कि-

'माता-पिता, गुरू, दैवम्'

जब मनुष्य का जन्म होता है, उस समय आपके जीवन में महत्वपूर्ण व्यक्ति कौन होता है? मां होती है। उस समय जब आपको स्तनपान की, गले लगाने की, चूमने की एवं पोषित करने की आवश्यकता होती है, तब मां ही महत्वपूर्ण है।

जब बच्चा चलना शुरू करता है तो पिता महत्वपूर्ण हो जाता है। क्योंकि पिता को बाहरी दुनिया की जानकारी होती है। पिता ही दुनिया की परिस्थितियों से अवगत कराता एवं उबारता है। इसलिए यहां पिता की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है।

इसके उपरान्त जब मनुष्य एक उच्चतर संभावना को प्राप्त करना चाहता है, तो उसे गुरू की आवश्यकता पड़ती है।

मां आपको पालती है, आपका पोषण करती है, पिता आपका मार्गदर्शन करते हैं, गुरू आपको गूंथते हैं। क्योंकि जब तक आप गूंथे नहीं जाओगे तब तक आप कुछ भी अच्छा नहीं कर सकते। जब तक आटे को अच्छी तरह गूंथा न जाए, तब तक वैसी रोटियां नहीं बन पाएंगी, जिसे कोई भी खा सके। आपको वैसी रोटी बनाने के लिए, जिसका परमात्मा उपभोग करना चाहें, गुरू की आवश्यकता होगी।

।। प्रार्थना ।।

ऐसी सद्बुद्धि मुझे दो,ज्ञान के पथ पर चलुं।
मातु, पितु, गुरूदेव को, प्रणाम मैं झुककर करूं।।

भूख और प्यास में भी ,नाम न भूलूं तेरा,
हर कार्य अपने मन में मैं,धैर्य रखकर करूं।
मातु, पितु, गुरूदेव को.....।।

लोक सेवा दिल से अपने, चाहता हूं करनी मैं,
धर्म नीति पर सदा मैं, हे प्रभु चलकर मरूं।
मातु, पितु, गुरूदेव को.....।।

मान 'मदन' तुझे शून्य, करता तेरी आराधना,
शून्य बिन मैं सैंकड़ा क्या, दहांई न पूरी कर सकुं।
मातु, पितु, गुरूदेव को.....।।

ईश्वर... 4
!
3 ... गुरू
!
पिता... 2
!
1 ... माता

ईश्वर

ईश्वर सर्वव्यापी है, सर्व शक्तिमान है, तीनों लोकों का स्वामी है, सबका मंगल करने वाला है, ईश्वर सत्य है, ईश्वर शिवम है, ईश्वर सुन्दर है एवं सबका न्याय करने वाला है। भिन्न-भिन्न समुदाय, पन्त, धर्म एवं मजहब के लोग भिन्न-भिन्न रूपों में ईश्वर की पूजा-अर्चना करते हैं एवं मानते हैं। लेकिन सबका मूल एक ही है, ईश्वर की उपासना, आराधना करना। लेकिन ये तो अटल सत्य है कि ईश्वर है तो जरूर, बस उसको देखने के लिए, उसको महसूस करने के लिए आपके पास वो दूरदृष्टि अथवा दृष्टि है कि नहीं ये स्वयं पर निर्भर करता है।

है धुने में, धूने में, है धुने की तांत।
वास उसका हर जगह, हर बसर, हर जात।।

संसार के अधिकतर लोग, चाहे वह ज्ञानी जन हों, महापुरुष, सन्त अथवा दार्शनिक हों और किसी भी धर्म, पन्त, समुदाय अथवा मजहब से हों, ये बात तो मानते हैं कि ईश्वरीय शक्ति हर जगह मौजूद है और समय-समय पर वह अपने होने का एहसास भी कराती रहती है।

जिस प्रकार उपरोक्त पंक्तियों में स्पष्ट करने की कोशिश की गई है कि ईश्वर हर जगह मौजूद है। चाहे वह रूईं धुनने वाला धुना हो, धुने की तांत हो जिससे वह रूईं धुनता है अथवा किसी सन्त का धूना हो जिसमें हर समय अग्नि विद्यमान रहती है। प्रत्येक जीव में, प्रत्येक जाति में यानि कि ईश्वर हर जगह मौजूद है।

किसी बहुत ही प्रसिद्ध कवि ने लिखा है कि :-

हर जगह मौजूद है, लेकिन नजर आता नहीं।
योग, साधन के बिना, कोई उसे पाता नहीं।।

-अज्ञात कवि

ये तो हम जानते हैं अर्थात् अनुभव करते हैं कि ईश्वर कण-कण में विद्यमान है, लेकिन योग साधन के बिना उसे कोई पा नहीं सकता। उसको पाने की प्रणाली है अथवा सूत्र है, जो हमारे पास होना चाहिए, तभी हम ईश्वर के होने का अनुभव कर सकते हैं।

ईश्वर प्रत्येक जीव में, पेड़-पौधों में एवं प्रकृति में है। लेकिन जहां अहंकार है, वह वहां नहीं बसता, अहंकार से ईश्वर का छत्तीस का आंकड़ा है। जैसे कि निम्नलिखित पंक्तियों में बताया गया है-

मैं में मैं रमता नहीं, मैं से मुझको बैर।
बकरा बनके देख लो, नहीं तुम्हारी खैर।।

पशुओं की श्रेणी में जो जीव है, जिसको बकरे के नाम से उच्चारित करते हैं, उसको अहंकार की ऊपमा दी गई है। यानि कि जो मैं-मैं करता है उसकी गर्दन पर ईश्वर कसाई का रूप धारण कर छुरी चला देते हैं।

ईश्वर को पाने अथवा अनुभव करने का सिलसिला माता-पिता से प्रारम्भ होकर गुरू तक जाता है। ईश्वर को पाने अथवा अनुभव करने में माता-पिता एवं गुरू की लगभग समान भूमिका है।

भजन क्या वो जिसमें वंदे, राम का है नाम नहीं।
चेला क्या वो गुरू को जो, करता है प्रणाम नहीं।।

छोड़ के रंगले, बंगले, मोटर, हरि से हेत लगाले तू,
गुरू के चरणों में जा करके, सोई सुरत जगाले तू,
माया, मोह में फंसकर मूरख, मिलता है आराम नहीं।
चेला क्या वो गुरू को जो.....।।

ध्यान लगाकर बात मेरी सुन, भूल न जाना इनको,
इन तीनों देवों की सेवा, से मुक्ति मिलती जन को,
मात, पिता और गुरू की सेवा, होती कभी हराम नहीं।

चेला क्या वो गुरू को जो.....।।

राम नाम का नशा चढ़े तो, उतर नहीं पाता है फिर,
देशी, ठर्रा पीने वाला, आता और जाता है फिर,
पीकर उतर जाए जो जल्दी, जामों में वो जाम नहीं।
चेला क्या वो गुरू को जो.....।।

राम नाम के हीरे मोती, लेकर भव से तर जाओ,
बांट रहे हैं 'मदन' गुरूजी, इनको लेकर घर जाओ,
हरि नाम जपने से अच्छा, दूजा कोई काम नहीं।
चेला क्या वो गुरू को जो.....।।

माता-पिता एवं गुरू को देवतुल्य मानकर मनुष्य ने ईश्वर को पाने का एवं अनुभव करने का अभूतपूर्व प्रयास किया है।

ईश्वर

!

गुरू

!

माता + पिता

आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता में समन्वय

अध्यात्म का बहुत ही व्यापक रूप है, भिन्न-भिन्न संतों, ज्ञानियों एवं बुद्धि जीवियों ने अध्यात्म को अलग-अलग तरह से परिभाषित किया है। संतों, बुद्धिजीवियों एवं ज्ञानी महापुरुषों का अनुकरण करके आमजन भी अध्यात्म को जानने एवं समझने का प्रयास करता है। लेकिन अनुशासित न होने के कारण आमजन अध्यात्म के मूल तक नहीं पहुंच पाता। क्योंकि अध्यात्म के मूल को समझने के लिए किसी भी जन का अनुशासित होना परम आवश्यक है।

किसी भी जन का केवल धार्मिक होना ही आध्यात्मिकता को नहीं दर्शाता। धार्मिकता एक अलग विषय है, लेकिन धार्मिकता किसी भी जन के अन्तर्मन में आध्यात्मिकता को जानने की जिज्ञासा पैदा कर सकती है अर्थात् धार्मिकता अध्यात्म तक पहुंचने के लिए पहली सीढ़ी साबित हो सकती है।

आध्यात्मिकता और धार्मिकता का मानवता से बहुत ही गहरा सम्बन्ध है। जिसको समझने के लिए हमें संतों बुद्धिजीवियों एवं ज्ञानी महापुरुषों की संगत करनी होगी और उनकी वाणी से निकले अमृत तुल्य शब्दों का पान कर आत्मसात करना होगा।

आध्यात्मिकता और धार्मिकता दोनों ही मानवता रहित नहीं हो सकती, हां! दोनों का प्रतिशत भिन्न-भिन्न हो सकता है। जिसमें आध्यात्मिकता को मानवता की प्रथम श्रेणी में रख सकते हैं एवं धार्मिकता को मानवता की द्वितीय श्रेणी में रख सकते हैं।

यदि किसी भी जन में धार्मिकता और आध्यात्मिकता के गुण नहीं हैं तो वह जन मानवता की निम्न श्रेणी में आता है। क्योंकि वह क्षणभंगुर जीवन के मूल को जानना ही नहीं चाहता। निम्न श्रेणी मानव जन स्वयं तक ही सीमित रहते हैं। वह स्वयं के स्वार्थ के बारे में अधिक सोचते हैं। स्वयं का स्वार्थ सिद्ध होना उनके लिए बहुत बड़ी उपलब्धि होती है।

महापुरुषों के मार्गदर्शन की महत्त्वता

आध्यात्मिक और धार्मिक विचार हमें एक साधारण मनुष्य से मानवता की ओर बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। मानवता को यदि परिभाषित किया जाए तो हम इस प्रकार भी कह सकते हैं।

जब भी कोई व्यक्ति महापुरूषों से प्रेरित होकर अपने अंदर सकारात्मक मानसिक परिवर्तन लाता है और मानवता की भलाई के कार्यों में लग जाता है, वही मानव कहलाने के योग्य है।

समर्पण की भावना, सौहार्द, विनयशील आचरण, विवेक, विपरीत परिस्थितियों से सामंजस्य ही एक साधारण मनुष्य को असाधारण बनाता है। जब ये असाधारण मनुष्य प्रत्येक शरीर में प्रभु की छवि देखने लगता है और साधारण मनुष्यों एवं दानव प्रवृत्ति के मनुष्यों को सही राह दिखाने का प्रयास कर समाज की भलाई एवं ईश्वर प्रेम की ओर अग्रसित करता है, तो वह मानव न रहकर महामानव की भूमिका निभाता है।

जैसे- हमारे समाज एवं देश में ऐसे अनगिनत महापुरुष विद्यमान हैं। जो आमजन का सही मार्गदर्शन कर उन्हें प्रभु की राह पर ले जाने का प्रयास कर रहे हैं। जैसा कि निम्नलिखित पंक्तियों में वर्णन किया गया है।

।। मत कर तू अभिमान ।।

दोहा - इस मिटटी की काया का, करता क्या अभिमान है।
मिटटी में मिल जाएगी, प्रभु का ये फरमान है।।

.....

हे मानुष क्यों दुनिया में तू, दुख के कोड़े झेले।
प्रभु से करके प्रीती वन्दे, माला प्रभु की जपले।।

भोग भोगने के चक्कर में तूने, जीवन व्यर्थ गँवाया,
मिला न तुझको कुछ भी वन्दे, पाकर सब कुछ खोया,
हरि चरणो में जाकर के तू, ओम नाम को लेले।
प्रभु से करके प्रीति वन्दे, ...।।

गुरू की सेवा करी कभी न, माया का अभिमान किया,
आते - जाते राहगीरों को, कभी न तूने प्रणाम किया,
मतकर तू अभिमान रे वन्दे, प्रभु के रंग में रंगले।
प्रभु से करके प्रीति वन्दे, ...।।

अपने को कर प्रभु हवाले, छोड़ के मोह और माया,
फिर तो वन्दे साथ न देवे, माटी की ये काया,
'मदन' तू माटी की काया से, भजन प्रभु का करले।
प्रभु से करके प्रीति वन्दे, ...।।

प्रभु प्रेम

निःस्वार्थ मानव प्रेम ही सच्चा मानव प्रेम है। जो मनुष्य अपनी पारिवारिक एवं सामाजिक जिम्मेदारियों को निःस्वार्थ और ईमानदारी पूर्वक निभाता है, वही मनुष्य सच्चा मानव प्रेमी है। अर्थात् सच्चा मानव प्रेमी ही, प्रभु प्रेमी हो सकता है। जो मानव होकर मानव से घृणा करता है, वह प्रभु प्रेमी हो ही नहीं सकता। क्योंकि प्रभु अपने होने का अनुभव प्रकृति, जीव एवं प्राणियों के माध्यम से ही कराते हैं। जैसा कि निम्नलिखित पंक्तियों में बताया गया है-

पद्य-

जमी में, फलक में, तुझे देखता हूं,
नदी, पर्वतों में, तुझे देखता हूं ।
अजब है कहानी, अजब किस्सा तेरा,
हर शै में जलवा, तेरा देखता हूं ।।

जो मनुष्य प्रकृति प्रेमी नहीं है, जीव प्रेमी नहीं है, मानव प्रेमी नहीं है, वह मनुष्य आध्यात्मिक और धार्मिक हो ही नहीं सकता। सारे संसार के ज्ञानियों, बुद्धिजीवियों एवं संतों ने प्रकृति प्रेम, जीव प्रेम एवं मानव प्रेम को ही प्रभु प्रेम बताया है। ईश्वर दुनिया की हर शै में विद्यमान है, इसलिए मनुष्य को दुनिया की हर शै से प्रेम करना चाहिए। निम्नलिखित पद्य के माध्यम से ये बताने का प्रयास किया गया है कि ईश्वर सर्व शक्तिमान है और सर्व व्यापक है अर्थात् ईश्वर कण-कण में बसता है।

।। मेरा यार है मेरा रब ।।

बसदा-बसदा, मेरा रब बसदा,
बसदा-बसदा, मेरा रब बसदा।
मेरा यार है मेरा रब,
मेरा रब मेरे दिल बिच बसदा।।

सजदों में और इबादत में, कुरआन की हर इक आयत में,
तुलसी की हर चौपाई में, मंदिर की हर इक मूरत में,
बसदा-बसदा, मेरा रब बसदा।
मेरा यार है मेरा रब.....।।

वो मिलन में और जुदाई में, है ग़ज़ल में और रुबाई में,
वो शायर के जज्बातों में, और कवियों की कविताई में,
बसदा-बसदा मेरा रब बसदा।
मेरा यार है मेरा रब.....।।

वो जमीं में और फलक में है, वो शम्सो कमर की चमक में है,
वलियों की दुआओं में है वो, साधु-संतों की अलक में है,
बसदा-बसदा मेरा रब बसदा।
मेरा यार है मेरा रब.....।।

शब्दों का चक्रव्यूह

जिस प्रकार अर्जुन पुत्र अभिमन्यु अपने विपक्षियों के द्वारा बनाए गए चक्रव्यूह के सातों दरवाजे नहीं तोड़ पाया और मृत्यु को प्राप्त हुआ। इसी प्रकार अधिकांश मनुष्य इन सात शब्दों के चक्रव्यूह में फंसकर प्रभु दर्शन ही नहीं कर पाते, बल्कि तड़प-तड़पकर अपने प्राणों की आहुति भी दे देते हैं। जो निम्न प्रकार हैं-

1. अहंकार।
2. क्रोध।
3. लोभ।
4. मोह।
5. काम।
6. माया।
7. झूठ।

इसका मुख्य कारण है आधा अधूरा ज्ञान, आधे अधूरे ज्ञान का मुख्य कारण है, पूर्ण गुरू का अभाव। एक बहुत पुरानी कहावत है।

जैसा गुरू, वैसा चेला।
दोनों नर्क में, ठेलम ठेला।।

अर्थात्

'गुरू कीजै जानकर, पानी पीजै छानकर।'

कहने का तात्पर्य यह है कि संसार में किसी भी कार्य को करने के लिए एक कार्य प्रणाली होती है, जिसके माध्यम से हम अपने उद्देश्य की पूर्ति कर पाते हैं। यदि हम कार्य प्रणाली का अनुसरण नहीं करेंगे, तो हम अपने उद्देश्य को पूरा नहीं कर पाएंगे। इसलिए हमें हमेशा ही उच्च कोटि के ज्ञानी, महापुरूषों के सानिध्य में रहकर शिक्षण लेना चाहिए।

जब तक हम ज्ञानी महापुरुषों की कसौटी पर खरे नहीं उतर पांए, तब तक हमें उनसे शैक्षणिक ज्ञान लेते रहना चाहिए। फिर एक समय ऐसा आएगा कि आप समाज और संसार में हीरे की भाँति चमक बिखेरोगे तथा किसी भी चक्रव्यूह को भेदने की क्षमता आपके अंदर होगी।

सात शब्द रूपी दरवाजों ने एक चक्रव्यूह का निर्माण किया है, जिसको साधारण मनुष्य तोड़ने में असक्षम है। ये सात शब्द रूपी दरवाजे ही हमें मानव प्रेम में बाधा डालते हैं, धार्मिक पथ पर चलने से विचलित करते हैं तथा अध्यात्म एवं प्रभु प्रेम से बंचित कर देते हैं।

मन की चादर रंग कर वन्दे, बनते संत फकीर ।
तन की चादर रंगने वाले, पीटत रहे लकीर ।।

इसलिए यदि हम धार्मिक पथ पर चलना चाहते हैं, प्रभु प्रेम पाना चाहते हैं, अध्यात्म को अपने जीवन का उद्देश्य बनाना चाहते हैं या हम मानव प्रेमी बनना चाहते हैं तो हमें पूर्ण गुरू अर्थात् ज्ञानी महापुरूषों के सानिध्य में रहकर, इन सात शब्द रूपी दरवाजों को तोड़ने की कला सीखनी होगी।

1. अहंकार :-

ईश्वर द्वारा बनाई हुई प्रकृति से प्राप्त चीजों को अपना समझना और उनका घमंड करना अहंकार का संकेत है। क्योंकि पहली बात तो ये है कि न तो आप कुछ लेकर आए और न ही कुछ लेकर जाओगे, फिर अहंकार किस बात का ।

आपको शरीर माता-पिता के माध्यम से ईश्वर ने दिया, धन,वैभव, यश, ज्ञान, बुद्धि ईश्वर के माध्यम से मिले, आपका अपना क्या है? किसका घमंड करते हो। अहंकार अंत की निशानी है। यदि आपके अंदर धन का, बल का, ज्ञान का अहंकार उत्पन्न हो रहा है तो समझ लीजिए आपका अंत नजदीक है।

मैं में मैं रमता नही, मैं से मुझको बैर ।
बकरा बनके देखलो, नहीं तुम्हारी खैर ।।

अर्थात् ईश्वर कहते हैं कि अहंकार से मेरी शत्रुता है, जहां अहंकार होगा मैं वहां निवास नहीं करता। मैं-मैं करने वाले बकरे की गर्दन पर जिस प्रकार कसाई छुरी चलाता है, उसी प्रकार मैं-मैं करने वाले मनुष्य अथवा जीव मुझे पसंद नहीं हैं।

अर्थात् अहंकार को त्याग कर स्वयं को जानो और प्रभु चरणों में तन, मन, धन समर्पित कर, अपने मनुष्य जीवन को सफल बनाने का प्रयत्न करो, इसी में हमारी भलाई है।

2. क्रोध :-

क्रोध की उत्पति भी अहंकार से ही मानी जाती है। ज्ञानी, बुद्धि जीवी एवं महापुरुष बताते हैं कि बलवान ही कमजोर पर क्रोध करने की चेष्ठा करता है, धनवान ही निर्धन का शोषण करने का प्रयास करता है और करता भी है।

ज्ञानी अज्ञानी पर टिप्पणियां करता है। जबकि महापुरुषों के अनुसार बलवान को निर्बलों पर दया करनी चाहिए, धनवान को निर्धन की मदद करनी चाहिए, ज्ञानी लोग अज्ञानी को प्यार से अपनी बात बताएं तो, क्रोध के प्रतिशत को बहुतायत कम किया जा सकता है।

मर्यादा में रहकर अपना, जीवन जियो सदा,
मार क्रोध को गम का तुम, अमृत पियो सदा ।
तू-तू, मैं-मैं करते हैं जो, कहलाते हैवान,
वो ज्ञानी कहलाया जिसने, चिंतन कियो सदा ।।

अर्थात् ईश्वर महापुरुषों के रूप में धरती पर आकर हमें ये संकेत देते हैं कि हमें अपना जीवन सदा मर्यादाओं में रहकर ही जीना चाहिए। जैसा कि विष्णु भगवान ने त्रेतायुग में राम अवतार यानि कि मर्यादा पुरुषोत्तम राम बनकर यह प्रमाणित किया है कि, हमें अपनी मर्यादाओं एवं आचरण का सदैव ध्यान रखना चाहिए। हमारे कारण किसी को छिन भर भी कष्ट न हो, अन्यथा हमारा जीवन निरर्थक है।

हमें सदैव ही इस बात का चिंतन एवं मनन करना चाहिए तभी हमारा जीवन सार्थक होगा।

3. लोभ :-

प्रकृति एवं संसार का आकर्षण जीव के मन में लोभ उत्पन्न करता है। लोभ के माध्यम से जीव अपना स्वार्थ पूरा करना चाहता है। लेकिन ये जीव का अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण न होने के कारण होता है।

पाँच ज्ञानेन्द्रियां :-

1. आंख ।
2. नाक ।
3. कान ।
4. जीभ ।
5. और त्वचा।

पाँच कर्मेन्द्रियां :-

1. हाथ ।
2. पैर ।
3. मुंह ।
4. गुदा ।
5. और लिंग।

चार अन्तःकरण :-

1. मन ।
2. बुद्धि ।
3. चित्त ।
4. और अहंकार ।

लोभ हमें आन्तरिक रूप से जीर्ण करता है, हमारे अन्तर्मन को कमजोर बनाता है। हम प्रकृति अथवा सांसारिक आकर्षण देखकर अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण नहीं रख पाते और कुछ अनर्थ कर डालते हैं।

।। अंतर के पट खोल ।।

माया, मोह और लोभ छोड़ प्राणी, हरि नाम को गाए जा।
रंगले, बंगले साथ न जावें, यहीं पे सब रह जाएगा।।

बचपन में तुझे ज्ञान क्या होता, जब मात-पिता ने न सिखलाया,
दुनिया के भोगों में डालकर, अच्छा बुरा न समझाया,
भोगवाद में मत पड़ वरना, जीवन व्यर्थ गॅवाएगा।
रंगले, बंगले साथ न जावें,..... ।।

एक दिन तूने याद किया न, प्रभु के सच्चे नाम को,
जोश जवानी में समझा न तूने, प्रभु के किसी फरमान को,
अंतर के पट खोल ले वरना, अंत काल पछताएगा।
रंगले, बंगले साथ न जावें,..... ।।

चौथेपन में आकर तुझको, प्रभु का थोड़ा ज्ञान हुआ,
इतने में तेरी काया सूखी, और प्रभु का फरमान हुआ,
अब क्यों तू पछताता रे वन्दे, लख चौरासी पाएगा।
रंगले, बंगले साथ न जावें,..... ।।

सुनी प्रेमियों प्रभु की माया, कर्महीन क्या कर पाए,
बिना कर्म के अभी किसी ने न, प्रभु के दर्शन पाए,
'मदन' किए जा याद हरि को, खाक में सब मिल जाएगा।
रंगले, बंगले साथ न जावें,..... ।।

अर्थात् लोभ का मुख्य कारण, ज्ञानी, बुद्धिजीवी एवं महापुरुषों की संगत न करना और संसार के गलत व्यसनों में मन लगाना है। जिसके कारण हमारे अंतःकरण में लोभ जन्म लेता है और परिणाम स्वरूप हमें इसका दंड भुगतना पड़ता है। हम अनमोल हीरे जैसे मनुष्य जन्म को, यूं ही गँवा देते हैं, और ईश्वर प्रेम से बंचित रह जाते हैं।

4. मोह :-

सत्य की संगत करने में, हरि भजन एवं हरि दर्शन में महापुरुषों का सानिध्य पाने में मोह सदैव ही बाधा उत्पन्न करता है और हमें सन्मार्ग पर चलने से विमुख कर देता है। रिश्तों का मोह,धन का मोह, सम्पत्ति का मोह इत्यादि।

माया, मोह छोड़कर, लगा हरि से आस ।
सब तुझको मिल जाएगा, तू क्यों भया उदास ।।

जीव अर्थात् मनुष्य सदैव उसकी चाह में अपना अनमोल जीवन व्यर्थ गँवा देता है, जो उसका है ही नहीं। उपरोक्त पंक्तियों में बताया गया है कि माया, मोह छोड़कर हरि को, परमपिता परमात्मा को अपना बना। जो सबको देता है उससे आस लगा, तू उदास मत हो, ईश्वर कभी किसी को निराश नहीं करता।

जीवन के सत्य को जानने का प्रयास करना चाहिए, और सत्य क्या है ? केवल ईश्वर। ईश्वर को छोड़कर सारा संसार नश्वर है, जो समय-समय पर अपना रूप रंग बदलता रहता है। इसलिए कहने का तात्पर्य यह है कि, मोह उतना करें जितना आवश्यक है। अधिक मोह ईश्वर से विमुख कर देता है।

5. काम :-

काम वासना रूपी नशा जब किसी भी जीव के सर चढ़ता है, तो वह सत्य-असत्य, अच्छाई-बुराई, अपना-पराया भूल बैठता है। और वह अपनी मर्यादाओं को भूलकर वह कुकर्म कर बैठता है, जो सामाजिक, पारिवारिक, आध्यात्मिक, धार्मिक और मानवता की दृष्टि से एक घिनौना कार्य है।

मन चंचल नहीं मानता, यह दुख का आधार ।
जो नर मन बस में करे, मिटते कलेश विकार ।।

काम का सीधा संबंध चंचल मन से है, यदि जीव अपने मन पर नियंत्रण कर ले तो उसका जीवन पावन हो जाएगा और जीवन के सभी कष्टों से मुक्त हो जाएगा।

आज का समाज बहुत दूषित हो चुका है, जिसमें सुधार करने के लिए समय-समय पर महापुरुष अपने ज्ञान, भजन, भागवत एवं प्रवचनों से समाज को समझाने का प्रयास करते हैं। जीव प्रेम तो करता है, लेकिन वासना रूपी प्रेम में अधिक लिप्त रहता है। सच्चा प्रेम क्या है, इसे जानने एवं समझने का प्रयास नहीं करता।

काम वासना की पूर्ति के लिए भी गृहस्थ में, वैवाहिक प्रणाली का अविष्कार किया गया है। लेकिन उसके भी नियम हैं, उसकी भी अपनी मर्यादाएं हैं, मर्यादाओं में रहकर ही आप अपनी इच्छाओं की पूर्ति कर सकते हैं।

6. माया :-

संसार में सबसे बड़ा आकर्षण है माया, जिसने मनुष्य रूपी जीव को कसकर जकड़ रखा है, और उसको भ्रमित करने में माया की सबसे बड़ी भूमिका है। माया ने अपना माया रूपी जाल बिछा रखा है, जिससे बच पाना बड़ा ही मुश्किल कार्य है। यह मृग मारीचिका की तरह है।

माया आनी जानी है, तू भी एक दिन जाए ।
झूठे इस संसार में, तू क्यों पाप कमाए ।।

अर्थात् उपरोक्त पंक्तियों में कहा गया है कि, हे प्राणी इस नश्वर संसार में तू क्यों पाप का भागीदार बनता है, ये माया तो आनी-जानी है और तुझे भी यहां से एक दिन जाना है, इस माया रूपी संसार को छोड़कर। इसलिए उस प्रभु से हेत लगा, जिसने तुझे और इस संसार को रचा है।

माया ईश्वर प्रेम में सबसे बड़ी बाधा है। माया ने हमें उलझा कर रखा हुआ है। जब-जब हम सत्य को खोजने का प्रयास करते हैं, तब-तब माया हमें हमारे मार्ग से भटका कर कहीं ओर ले जाती है। जिस प्रकार निम्नलिखित पंक्तियों में बताया गया है-

मोक्ष मिला न धन मिला, न ही मिला सुख चैन।
तू क्यों नर संसार में, भटक रहा दिन रैन।।

इस माया के चक्कर में फंसकर न तो मोक्ष मिला, न धन मिला और न ही सुख-चैन मिला, अर्थात् माया ने ऐसा भ्रमित किया कि कहीं का भी नहीं छोड़ा।

7. झूठ :-

मनुष्य रूपी जीव सबसे बड़ा झूठ तो ये बोलता है कि, मैं कभी झूठ नहीं बोलता। एक झूठ को छुपाने के लिए सौ झूठ बोलता है, और फिर कहता है कि मैं झूठ नहीं बोलता। यही कारण है कि ऐसा मनुष्य सब कुछ होते हुए भी स्वयं को अकेला एवं कंगाल पाता है। जिस सत्य को खोजने के लिए उसका इस संसार में जन्म हुआ है, वह उस सत्य अर्थात् ईश्वर प्रेम को तरस जाता है।

झूठ कपट को त्याग कर, कर अच्छा व्यवहार ।
कू संगत में बैठ 'मदन', न कर उल्टे कार ।।

अर्थात् हे मनुष्य रूपी जीव कू संगत में बैठकर गलत कर्मों एवं व्यसनों में मन को मत लगा, झूठ और कपट को त्याग कर संसार में प्रेम का व्यवहार कर, ईश्वर का भजन कर, सत्य की खोज कर, जिससे तेरा मनुष्य रूपी जन्म सार्थक हो जाए और प्रभु चरणों में स्थान मिले।

अहंकार, क्रोध, लोभ, मोह, माया, काम, और झूठ ये सब मिलकर जीव को भ्रमित कर, भक्ति मार्ग से विचलित कर भटकाने का प्रयास करते हैं। अतः इन पर नियंत्रण कर लिया जाए तो, हमारा मनुष्य जीवन सार्थक हो जाए।

इन सब पर नियंत्रण पाने के लिए हमें सदगुरू की शरण में जाना होगा। क्योंकि सद्गुरु ही इनके प्रभाव को कम कर सकते हैं।

अनुसंधान

व्यापक अर्थ में अनुसंधान किसी भी क्षेत्र में ज्ञान की खोज करना होता है। जो हमारे अंदर नई खोज करने की जिज्ञासा है, उसको बल देने का प्रयास किया जाता है। पुराने सिद्धांतों, नियमों एवं सूत्रों का पुनः परिक्षण कर नए तथ्य खोजने का प्रयास किया जाता है। जिसमें बोध पूर्वक तथ्यों का संकलन कर, व्यवस्थित व सावधानी पूर्वक सूक्ष्म बुद्धि से तथ्यों का अवलोकन कर नए तथ्यों एवं सिद्धान्तों की खोज की जाए।

अध्ययन एवं शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करते हुए, अपने ऐच्छिक एवं शैक्षिक विषय में कुछ नवीन जोड़ने की प्रक्रिया अनुसंधान कहलाती है। इसमें अध्ययन कर्ता से, अपने शोध से कुछ ज्ञान के नए तथ्य तथा आयाम उद्घाटित करने की अपेक्षा की जाती है। इसके द्वारा हम कुछ नया अविष्कृत कर उस ज्ञान परम्परा में कुछ नए अध्याय जोड़ते हैं।

भूतकाल में आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता :-

भूतकाल में आध्यात्मिकता, धार्मिकता मानवता में गहरा संबंध रहा है। मानवतावादी, धार्मिक और आध्यात्मिक महापुरुषों ने समाज को जागरूक करने में अपनी अहम भूमिका निभाई है। क्योंकि आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता हमारे समाज के मेरूदंड हैं। इन्ही पर सारा समाज एवं संसार टिका हुआ है।

यदि आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता को समाज से अलग कर दिया जाए तो, समाज में तुरन्त दैत्यों, दानवों जैसा व्यवहार करने वालों की कमी नहीं रहेगी। जिस प्रकार घोड़े को लगाम नियन्त्रित करती है, उसी प्रकार हमारे समाज को आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता नियन्त्रित करती है। प्रत्येक युग में इनका अपना-अपना महत्व रहा है।

दूसरों की कर बुराई, पाप क्यूं निशदिन कमाए ।
बिन भजन ये दिन जवानी, के तू क्यूं छिन छिन गवाए ।।

कई प्रकार के उदाहरण देकर महापुरुषों ने, समाज के मानसिक रूप से बीमार लोगों को नई सोच एवं दिशा देने का प्रयास किया है।

वर्तमान काल में आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता :-

वर्तमान काल में आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता, आधुनिकता के कारण प्रभावित हुई है। आज वर्तमान में मनुष्य व्यस्तता के कारण आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता को नजरअंदाज कर रहा है। इसका सबसे बड़ा कारण विज्ञान भी है, लेकिन विज्ञान अपने स्थान पर सही है। जो लोग वैज्ञानिकों द्वारा निर्मित उपकरणों का सही प्रयोग नहीं कर पा रहे हैं। वैज्ञानिक उपकरणों के दुरुपयोग ने समाज में एक बीमारी का रूप ले लिया है।

वर्तमान में हमारे देश के सन्त, महापुरुष, बुद्धिजीवी और समाज सुधारक एवं समाज सेवक, समाज के मानसिक रूप से पीड़ित लोगों को आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता का पाठ पढ़ाकर उनका मार्गदर्शन कराने में रात-दिन प्रयासरत हैं। उनका यह प्रयास धीरे-धीरे रंग ला रहा है। इसमें सोशल मीडिया का बहुत बड़ा योगदान है।

हरि नाम रटता नहीं, सुख की करे पुकार ।
ऐसे जीवन से भला, पड़ा रहे बीमार ।।

बिना कर्म किए, बिना हरि नाम लिए सुख की इच्छा रखने वाले मनुष्य को भला सुख कैसे प्राप्त हो सकता है। अर्थात् इससे अच्छा तो ये है कि वह बीमार ही पड़ा रहे। बीमार मनुष्य कम से कम ईश्वर का नाम तो लेता रहता है।

भविष्य काल में आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता :-

हमारे भारतवर्ष में लाखों-लाख की संख्या में सन्त जन, ज्ञानी, महापुरुष विद्वान समाज को ज्ञान रूपी अमृतपान कराने में प्रयासरत हैं। ज्ञान रूपी अमृत बांटने की महापुरुषों की अपनी-अपनी युक्ति है।

माया से काया भली, और खाली से काम ।
जग में वो सबसे भला, जो रटता हरिनाम ।।

उपरोक्त पंक्तियों में बताया गया है कि, माया से अच्छी काया है और खाली से अच्छा काम है, और जग में सबसे अच्छा व सुन्दर वह है, जो प्रभु नाम लेता है, ईश्वर को भजता है।

देने से घटता नहीं, ज्ञानवान का ज्ञान ।
तू नर इस संसार में, दो दिन का मेहमान ।।

कहने का तात्पर्य यह है कि हे मनुष्य तू इस माया रूपी संसार में सदा नहीं रहने वाला, इसलिए तेरे पास जो ईश्वर रूपी ज्ञान है अर्थात् कमाई है उसको समाज में बांटने का कार्य कर, इसी में तेरी भलाई है। अच्छाई को हमेशा बांटते रहना चाहिए, क्योंकि अच्छाई बांटने से और बढ़ती है।

हमारे सन्त जन और महापुरुष अच्छाई को प्रवचन के माध्यम से, भजनों के माध्यम से, पौराणिक कथाओं के माध्यम से और भागवत इत्यादि के माध्यम से समाज तक पहुंचाने का कार्य करते हैं। जिसके कारण हमारे समाज का सन्तुलन बना हुआ है।

भविष्य काल में आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता का आपस में समन्वय हो और समाज में आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता का मनुष्यों में आन्तरिक विकास हो, जिससे हमारे समाज का भविष्य सुनहरा हो।

अनुसंधान की आवश्यकता

अनुसंधान मानव जीवन को गति देने, दिशा देने एवं निर्देशित करने में अत्यन्त आवश्यक है। आज के आधुनिक युग में अनुसंधान के माध्यम से ही नई-नई तकनीकियों का जन्म हो रहा है। अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सरल साधनों को प्राप्त करना मानव का स्वभाव है।

अनुसंधान के क्षेत्र एवं विषय अलग-अलग हो सकते हैं। जैसे- शिक्षा, सामाजिक विज्ञान, मनोविज्ञान, अध्यात्मवाद, जीव विज्ञान, मानवतावाद, धार्मिकता इत्यादि। अनेक महापुरुष एवं विद्वान जन भिन्न-भिन्न विषयों पर शोध करके समाज को कुछ नया देने का प्रयास करते हैं। ताकि हमारा समाज और देश नित नए आयाम गढ़े और कामयाबी के शिखर को छुए।

अनुसंधान एवं शोध की आवश्यकता इसलिए भी है, कि अनुसंधान एवं शोध के माध्यम से जो नए सकारात्मक परिणाम आते हैं, उनसे हमारे समाज के बुद्धिजीवी लोग प्रेरित होकर प्रसन्नता का अनुभव करते हैं एवं जीवन में अपनी सोच को सकारात्मक बनाते हैं।

अनुसंधान एवं शोध के अभाव में हमारे समाज, देश एवं व्यक्तिगत उन्नति की गति धीमी हो सकती है, हमारा समाज दिशाविहीन हो सकता है, अपनी क्षमताओं एवं प्रतिभा को बाहर निकालने से बंचित रह सकता है। जिससे समाज की बौद्धिक क्षति होने की संभावना बनी रहती है।

अनुसंधान किसी भी व्यक्ति को जिज्ञासु बनाता है, कुछ नया करने के लिए प्रेरित एवं लालायित करता है। शोधकर्ता अपना सौ प्रतिशत देकर कुछ नया रचने का प्रयास करता है। जिससे हमारे समाज एवं देश को आगे बढ़ने में मदद मिल सके, हमारा समाज एवं देश उन्नति के पथ पर अग्रसर हो और नित नए आयाम गढ़कर इतिहास रचा जा सके।

हमारे देश, समाज एवं मानव को नियमित रूप से शोध करते रहने की परम आवश्यकता है। क्योंकि शोध हमारे देश, समाज एवं मानव जन का आधार है। बिना आधार के किसी भी चीज को ऊंचाई देना असंभव है अर्थात् कल्पनातीत है। इसलिए शोध हमारे देश, समाज एवं मानवता के लिए मेरूदंड की तरह है।

शोध प्रबंध के मुख्य घटक

विषय - Topic.

महत्व - Significance.

व्यक्तिगत - Personal.

शोध प्रश्न और परिकल्पना - Reserch question and hypothesis.

अनुसंधान विधि - Reserch methods.

विषय - (Topic) - अनुसंधान अर्थात् शोध का विषय है आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता। आधुनिक युग की कल्पना करते हुए, यह विषय बहुत ही महत्वपूर्ण है। क्योंकि जिस प्रकार हमारे समाज एवं देश का पाश्चात्यकरण हो रहा है, उसको रोकना बहुत ही आवश्यक है।

यदि हम समाज एवं देश में फैल रहे पाश्चात्यकरण को रोकने में लापरवाही करते हैं तो, आने वाला भविष्य बहुत ही भयावह होगा। इसलिए हमें अपने समाज एवं देश में फैल रहे पाश्चात्यकरण को रोकने के लिए अटूट प्रयास करने होंगे।

भिन्न-भिन्न धर्म, मजहब एवं पंत के बुद्धिजीवी, ज्ञानी, सन्त एवं महापुरुष इस कार्य में तल्लीनता के साथ लगे हुए हैं, जिससे हमारे समाज एवं देश को पाश्चात्यकरण से बचाया जा सके।

मैं डॉ. मदन मोहन शर्मा भी, आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता विषय को चुनकर एवं उस पर शोध कर अपने समाज एवं देश को योगदान दने का प्रयास कर रहा हूं।

शोध प्रश्न और परिकल्पना:-(Research questions and hypothesis)

शोध प्रश्न :-

1. अज्ञात को जानने की जिज्ञासा ।
2. वर्तमान समस्या को जानने की इच्छा ।
3. निष्पक्ष मूल कारणों की खोज करने की इच्छा ।
4. पुरानी प्रणाली एवं नई प्रणाली को जांचने एवं अन्तर स्पष्ट करने की इच्छा ।
5. स्वयं को जानने की इच्छा ।

परिकल्पना:-(Hypothesis)

किसी भी घटना की व्याख्या करने वाला कोई सुझाव अथवा अलग-अलग प्रतीत होने वाली घटनाओं के आपसी सम्बन्ध की व्याख्या करने वाला कोई तर्क पूर्ण सुझाव परिकल्पना कहलाता है। लेकिन कोई भी परिकल्पना परिक्षणीय होनी चाहिए।

परिकल्पना शब्द का शाब्दिक अर्थ चारों ओर चिंतन करना, जहां परि का अर्थ 'चारों ओर' एवं कल्पना का अर्थ चिंतन होता है। इसमें परिकल्पना का परिक्षण किया जाता है, जो परिकल्पनाएं परिक्षण करने के उपरांत सुस्थापित होती है, उनको सिद्धांत कहा जाता है।

शोध के अन्दर केवल नए सत्यों एवं सिद्धांतों की खोज ही नहीं, अपितु पुराने सत्यों को नए ढंग से प्रस्तुत करना, पुराने सिद्धांतों को नवीन रूप प्रदान करना, पुराने तथ्यों का नए तरीके से स्पष्टीकरण करते हुए उनके मध्य के अंर्त सम्बन्धों का विश्लेषण करना सम्मिलित है।

शोध का महत्व :- (Significance)

1. शोध हमारे ज्ञान का विकास एवं विस्तार करता है।
2. मानव समाज की समस्याओं के हल का रास्ता सुझाता है।
3. शोध से तार्किक और समीक्षा की दृष्टि मिलती है।
4. शोध के बिना ज्ञान और विकास में बृद्धि संभव नहीं।
5. शोध बदलती परिस्थितियों में तथ्यों की व्याख्या और पुर्नव्याख्या सिखाता है।

शोध के उद्देश्य :-

1. भूतकाल एवं वर्तमान की स्थिति में अन्तर स्पष्ट कर मूल को समझना एवं उसका आंकलन करना।
2. किसी भी नए सत्य को खोजने का प्रयास करना।
3. भूतकाल को वर्तमान एवं भविष्य के अनुरूप व्यवस्थित तरीके से नवीनीकरण करना।
4. इतिहास में हुए परिवर्तनों का आंकलन कर वर्तमान स्थिति को ज्ञात करना।
5. पुरानी स्थिति एवं नई स्थिति में सम्बन्ध स्थापित करना।

शोध की विशेषताएं :-

1. शोध एक तर्क पूर्ण एवं वस्तुनिष्ठ प्रक्रिया है। इससे प्राप्त निष्कर्ष तार्किक तथा वास्तविक आंकड़ों पर आधारित होते हैं, तथा व्यक्तिगत पक्षपात से मुक्त होते हैं।
2. शोध द्वारा किसी नए तथ्य, सिद्धांत, विधि या वस्तु की, खोज की जाती है।
3. यह एक उद्देश्य पूर्ण बौद्धिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा किसी सैद्धांतिक अथवा व्यवहारिक समस्या का समाधान किया जाता है।
4. नवीन एवं पुरानी स्थितियों का विश्लेषण किया जाता है।
5. शोध से प्राप्त ज्ञान वैध तथा विश्वसनीय रहता है।

संदर्भ

अध्यात्म, धर्म और मानवता हमारे वेद, पुराणों से निकली अमृत धारा है। जिसको ऋषियों, महाऋषियों, कवि एवं लेखकों ने अपने आत्म अनुभव को साधारण जन तक पहुंचाने का प्रयास किया है।

यानि साधारण जन भी शास्त्रों एवं वेदों से निकले अध्यात्म रूपी अमृत का पान कर अपने जीवन को धन्य बना सकें, अर्थात् स्वयं को जान सकें और प्रभु को पहचान सकें।

व्याख्या :-

ऋषियों एवं महाऋषियों ने हमारे समाज एवं देश के प्रत्येक जन को अध्यात्म से जोड़ने का प्रयास किया है, जिसमें वह सफल भी हुए हैं। इसी परम्परा को आधुनिक युग के कवि, लेखक, सन्त, महापुरुष, विद्वान एवं बुद्धिजीवी आगे बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। क्योंकि आज के युग में बनावटी आकर्षण बहुत है। जिसको देखकर साधारण मनुष्य भ्रमित हो जाता है और जो आनंद का मूल है उससे बंचित रह जाता है।

कालचक्र में फंस रहा, भूलके तू हरिनाम।
आशा, तृष्णा त्यागकर, कर कुछ अच्छे काम।।

अर्थात् कवि के कहने का तात्पर्य यह है कि, हे मनुष्य तू माया, मोह, आशा, तृष्णा, तेरा और मेरा में फंसकर क्यूं अपने हीरे समान जीवन को यूं ही नष्ट कर रहा है।

तू प्रभु नाम से क्यों दूरी बनाए हुए है। जिसके सहारे सारा संसार गतिमान है। क्यूं कालचक्र में फंसकर अपनी मूर्खता सिद्ध करने में संलग्न है। इन सबसे बाहर निकल, कुछ अच्छे कार्य कर और प्रभु की शरण में आजा।

जैसे-

राम नाम रस घोलकर, कर तू इसका पान।
काम न तेरे आएगी, तेरी झूठी शान।।

उपरोक्त पंक्तियों में कवि ने मनुष्य रूपी जीव को ये बताने एवं समझाने का प्रयास किया है कि, ये जो तेरी झूठी शान है, अन्त समय यह काम नहीं आएगी। यदि तू राम नाम का जप करेगा, राम नाम को अपने आचरण में उतारेगा, अपनी जिह्वा से राम नाम का उच्चारण कर उसे ग्रहण करेगा, उसका पान करेगा तो भवसागर से पार हो जाएगा।

जैसे-

पीपल, पाहन पूजकर, मिलता नहीं भगवान ।
तुझमें ही मिल जाएगा, तू उसको पहचान ।।

उपरोक्त पंक्तियों का भावार्थ यह है कि, हे मनुष्य रूपी जीव तुझको पीपल और पत्थर पूजने से ही भगवान नहीं मिल सकते। तुझे परमपिता परमात्मा अर्थात प्रभु के दर्शन तुझमें ही हो जाएंगे, यदि तू पहचान सकता है तो पहचान। इसके लिए तुझे आत्म मंथन करना होगा अर्थात् आत्मा का अध्ययन करना होगा, तभी तू उस प्रभु की अनुभूति एवं अनुभव कर सकता है।

अध्यात्म

अध्यात्म शब्द का यदि संधि विच्छेद किया जाए तो, अध्ययन +आत्मा अर्थात् आत्मा का अध्ययन, यदि दूसरे शब्दों में कहा जाए तो आत्म मंथन।

परमात्मा ही हमारे शरीर में आत्मा के रूप में विद्यमान है। क्योंकि जब तक शरीर में आत्मा है, तब तक शरीर गतिमान है। लेकिन जैसे ही आत्मा शरीर से अलग होती है, शरीर अचल अर्थात् अगतिमान हो जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि शरीर का मूल्य तभी तक है, जब तक आत्मा के रूप में परमात्मा हमारे अंदर विद्यमान है। जैसे ही आत्मा रूपी परमात्मा हमारे शरीर से बाहर आता है, हमारा शरीर मिट्टी के रूप में परिवर्तित होने लगता है।

इसलिए हमें गुरूओं एवं महापुरूषों के सानिध्य में रहकर आत्म मंथन करना चाहिए, स्वयं को जानने का प्रयास करना चाहिए, प्रभु का स्मरण कर प्रभु को पहचान ने का प्रयास करना चाहिए।

जब हम स्वयं को जानने का प्रयास करेंगे, प्रभु का स्मरण करेंगे तो हम संसार के मायाजाल से निकलते चले जाएंगे, आशा, तृष्णा, लोभ हमें भटका नहीं सकते और हम बहुत सारे र्दुव्यस्नों से स्वतः ही दूर होते चले जाएंगे। लेकिन ऐसा तभी होगा, जब हम इसके लिए स्वयं तैयार होंगे।

स्वयं को जानने और प्रभु को पहचान ने की जिज्ञासा हमारे मन मस्तिष्क में होगी। बहुत ही उत्तम उदाहरण देकर समझाने एवं बताने का प्रयास किया गया है।

आया था परदेश में, बनके तू मेहमान ।
फंस माया के जाल में, खो बैठा तू प्रान ।।

बहुत ही सुन्दर शब्दों में समझाने एवं बताने का प्रयास किया गया है कि, हे मनुष्य रूपी जीव तू इस मृत्युलोक रूपी संसार में मेहमान बनकर आया था, अच्छे कर्म करने के लिए, प्रभु भजन के लिए, लेकिन तू आशा, तृष्णा, माया, मोह और मद में फंस गया। जो अनमोल जीवन तुझे प्रभु ने दिया था, तूने यूं ही व्यर्थ गंवा दिया अर्थात् मायाजाल में फंसकर अपने प्राणों की आहुति दे दी।

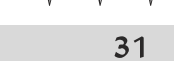

धर्म

धर्म मनुष्य जीवन के महत्व को स्पष्ट करता है। पवित्र भावनाओं को पैदा करता है एवं मानसिक तनाव व चिंताओं से दूर रखकर गलत, समाज विरोधी व धर्म विरोधी कार्यों के प्रति घृणा को पैदा करता है। धर्म व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास करता है एवं उसे सुख समृद्धि हेतु धार्मिक नियमों के अनुरूप आचरण के लिए प्रेरित करता है।

धर्म कर्त्तव्य परायण होता है, धर्म हिंसा रहित होता है, धर्म उत्तम न्याय करने वाला होता है, धर्म सदाचारी और सदगुणी होता है। धर्म अलग-अलग हो सकते हैं, लेकिन धर्म का मूल एक ही होता है। दुनिया में अलग-अलग धर्मों के अलग-अलग समूह बने हुए हैं। यदि हम धर्म के अलग-अलग समूहों की बात करें तो निम्न प्रकार है।

सामान्य रूप से धर्म के दो स्वरूप हैं। पहला धर्म है स्वभाविक धर्म और दूसरा भागवत धर्म। स्वभाविक धर्म का अर्थ है, जिस पर अमल करने से दैहिक संरचना से संबंधित कार्यों की पूर्ति होती है।

जैसे- आहार, निद्रा और मैथुन आदि क्रियाएं। भागवत धर्म वह है जो मनुष्य को दूसरे जीवों से अलग करता है।

शास्त्रों के अनुसार धर्म क्या है ?

धर्म ग्रन्थों के अनुसार धर्म का अर्थ है, यम और नियम को समझकर उनका पालन करना। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में से मोक्ष ही अंतिम लक्ष्य होता है। सनातन धर्म के अनुसार व्यक्ति को मोक्ष के बारे में विचार करना चाहिए।

जीववाद क्या है ?

जीववाद का संबंध किसी एक धर्म अथवा पंत से नहीं ,धर्म अलग-अलग पंतों के माध्यम से प्रत्येक जीव की सोच एवं सिद्धान्तों को दर्शाता है। भिन्न-भिन्न जीवों के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण हो सकते हैं। मनुष्य भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण के आधार पर भिन्न-भिन्न समूहों, पंतों में बंटा हुआ है। जैसे-

सनातन धर्म :-

सनातन धर्म का शाब्दिक अर्थ है शाश्वत या सदा बना रहने वाला अर्थात् जिसका आदि है न अन्त है। सनातन धर्म जिसे हिन्दू धर्म अथवा वैदिक धर्म के नाम से भी जाना जाता है। सनातन धर्म को दुनिया के सबसे प्राचीनतम धर्म के रूप में भी जाना जाता है। भारत की सिन्धु घाटी सभ्यता में हिन्दू धर्म के कई अवशेष एवं चिन्ह मिले हैं।

सनातन धर्म उस समय से है जब कोई संगठित धर्म अस्तित्व में नहीं था, क्योंकि जीवन जीने का कोई दूसरा तरीका नहीं था। इसलिए इसे किसी नाम की जरूरत नहीं थी। इसके बाद संगठित धर्मों का निर्माण एवं विकास हुआ। सत्य को ही सनातन का नाम दिया गया। सनातन शब्द सत् और तत् से मिलकर बना हुआ है। ईश्वर ही सत्य है, आत्मा ही सत्य है, मोक्ष ही सत्य है और इस सत्य के मार्ग को बताने वाला धर्म, सनातन धर्म भी सत्य है।

वह सत्य जो अनादि काल से चला आ रहा है और जिसका कभी भी अन्त होने की संभावना नहीं है। सनातन ही शाश्वत है जिसका आदि है न अन्त है, उस सत्य को ही सनातन कहते हैं। यही सनातन धर्म का सत्य है। सनातन प्राचीन संस्कृत भाषा का शब्द है। जिसका अर्थ अनादि एवं अनन्त है और जो शाश्वत है।

सनातन धर्म का दूसरा नाम :-

सनातन धर्म को हिन्दू धर्म अथवा वैदिक धर्म के नाम से भी जाना जाता है। इसे दुनिया के सबसे प्राचीनतम धर्म के रूप में भी सभी जानते हैं।

बहुदेववाद क्या है ?

बहुदेववाद अर्थात् बहुत से ईश्वर यानी देवतागण। हिन्दू धर्म आज के समय बहुदेववाद का सबसे स्पष्ट उदाहरण है। जिसमें तैंतीस कोटि देवताओं की मान्यता बताई जाती है। कुछ लोग यह तर्क देते हैं कि बाईबिल पुराने नियम में बहुदेववाद की शिक्षा देती है।

बहुदेववाद कई देवताओं में विश्वास है, जो सामान्यतः अपने स्वयं के धार्मिक सम्प्रदायों और अनुष्ठानों के साथ-साथ देवी देवताओं के एक सर्व देवालय में एकत्रित होते हैं। मनुष्यों द्वारा कम से कम 18000 विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा की जाती रही है।

एकेश्वरवाद क्या है ?

एकेश्वरवाद वह सिद्धांत है जहां ईश्वर के एकल स्वरूप की मान्यता प्राप्त अर्थात् ईश्वर एक है, विचार को सर्व प्रमुख रूप में मान्यता देता है।

क्या हिन्दू धर्म एकेश्वरवाद है ?

हिन्दू धर्म को एकेश्वरवादी धर्म माना जा सकता है। क्योंकि अधिकांश हिन्दू एक सर्वोच्च ईश्वर में विश्वास रखते हैं, जिसके गुणों और रूपों को कई देवताओं द्वारा दर्शाया जा सकता है जो सभी उनसे उत्पन्न होते हैं। हिन्दू मानते हैं कि ब्रह्म, ब्रह्मा, विष्णु और शिव के रूप में प्रकट हुआ है।

एकेश्वरवादी कितने धर्म हैं ?

यहूदी धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म, तीनों ही धर्म एकेश्वरवादी धर्म हैं। जिसका अर्थ है अन्य देवताओं के अस्तित्व को नकारते हुए एक ईश्वर की पूजा करना।

कई विद्वानों का मानना है कि एकेश्वरवादी धर्म का पहला उदाहरण मिश्र में लगभग 1350 ईसा पूर्व फिरौन अखानातेन के शासन के तहत था। मिश्र का धर्म प्रकृति में बहुदेववादी था और अखानातेन का इस परम्परा से हटना मिश्र के समाज में एक क्रांतिकारी परिवर्तन था।

यहूदी धर्म को पारंपरिक रूप से दुनिया के सबसे पुराने एकेश्वरवादी धर्मों में से एक माना जाता है। जबकि आठवी शताब्दी ईसा पूर्व में इजराइली बहुदेववादी थे, उनकी पूजा में एल, बाल, अशेरा और एस्टार्ट देवता शामिल थे। इस्लाम का मूल सिद्धांत एकेश्वरवाद था, केवल एक ईश्वर में विश्वास।

वह सिद्धांत जिसमें एक ईश्वर को ही संसार का सृजन और नियमन करने वाली सर्वोच्च शक्ति माना जाता है। यह सिद्धांत कि इस जगत का कर्ता-धर्ता और सबका उपास्य एक ही ईश्वर है।

एकेश्वरवाद से अभिप्राय है कि बहुत से देवताओं की अपेक्षा एक ही ईश्वर को मानना। इस धार्मिक एवं दार्शनिक वाद के अनुसार कोई एक सत्ता है, जो विश्व का सृजन और नियंत्रण करती है, जो नित्य ज्ञान और आनन्द का आश्रय है। जो पूर्ण और सभी गुणों का सागर है, जो सबका ध्यान केंद्र और आराध्य है।

एकेश्वरवाद के रूप :-

व्यवहारिक जीवन में एकेश्वरवाद की प्रधानता होते हुए भी परमार्थिक और आध्यात्मिक अनुभूति की दृष्टि से इसका पर्यवसान अद्वैतवाद में होता है। अद्वैतवाद अर्थात् मानव के व्यक्तित्व का विश्वात्मा में पूर्ण विलय।

सांसारिक सम्बन्ध से एकेश्वरवाद के कई रूप हैं, जो निम्न प्रकार हैं-

1. सर्वेश्वरवाद -

इसका अर्थ ये है कि जगत में जो कुछ भी है, वह ईश्वर ही है और ईश्वर सर्व जगत में विद्यमान है।

2. ईश्वर कारणतावाद -

इसके अनुसार ईश्वर जगत का निमित्त कारण है। जगत का उपादान कारण प्रकृति है। ईश्वर जगत की सृष्टि करके, उससे अलग हो जाता है और जगत अपनी कर्म श्रृंखला से चलता रहता है। न्याय और वैशेषिक दर्शन इसी बात को मानते हैं।

3. शुद्ध ईश्वरवाद -

इसके अनुसार ईश्वर सर्वेश्वर और ब्रह्मा के स्वरूप को भी अपने में आत्मसात कर लेता है। वह सर्वत्र व्याप्त अन्तर्यामी और जगत का कर्ता-धर्ता, संहर्ता, जगत सर्वस्व और आराध्य है।

4. योगेश्वरवाद -

इसके अनुसार ईश्वर व पुरुष है, जो कर्म और कर्म फल से मुक्त रहता है। उसमें ईश्वरीय और ज्ञान की पराकाष्ठा होती है, जो मानव का आदि गुरू और गुरूओं का भी गुरू है। ईश्वर योगियों का भी सहायक है। उनकी साधना के मार्ग में जो विघ्न बाधा उत्पन्न होती है, उन्हें वह दूर करता है और उनकी समाधि सिद्धि में सहायता करता है।

मानवता

मानवतावाद या मनुष्यवाद दर्शन शास्त्र में उस विचारधारा को कहते हैं। जो मनुष्यों के मूल्यों और उनसे संबंधित मसलों पर ध्यान देती है। अक्सर मानववाद में धार्मिक दृष्टिकोणों और अलौकिक विचार पद्धति को हीन समझा जाता है और तर्क शक्ति न्यायिक सिद्धांतों और आचार नीति पर जोर होता है।

मानवतावाद की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें मानवता के लिए सम्मान, स्वतन्त्रा और समानता के मूल्यों का पालन किया जाता है। इसका अर्थ यह है कि मानवतावाद समाज में सभी व्यक्तियों को न्याय, समानता और आधारभूत मानवाधिकारों की गारंटी देता है।

मानववाद –

मानववाद एक विश्वास अथवा दृष्टिकोण है जो सामान्य मानवीय आवश्यकताओं पर बल देता है और मानवीय समस्याओं के समाधान के लिए केवल तर्क संगत समाधान तलाशता है और मानव को उत्तरदायी एवं प्रगतिशील बुद्धिजीवी मानता है। मानववादी मानव की क्षमता में विश्वास रखते हैं।

मानवतावाद को यदि आध्यात्मिकता और धार्मिकता से जोड़ा जाए तो, मानवता इन सबकी नीव है, आधार है, जिस पर धार्मिकता और आध्यात्मिकता की इमारत खड़ी होती है। क्योंकि मनुष्य को संसार में कुछ भी अच्छा करने से पहले मानवता में भरोसा करना पड़ेगा।

यदि मानवता की व्याख्या की जाए तो, मानवता का अर्थ है सहयोग, अहिंसा, सामाजिकता, ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, ईश्वरवादी, धर्म परायण इत्यादि। जिस मनुष्य अथवा व्यक्ति में यह सारे गुण मौजूद हैं वह मानव कहलाने का अधिकारी है।

दुनिया में धर्म, पंत, मजहब को लेकर मतभेद हो सकते हैं, विचारों में भिन्नता हो सकती है। लेकिन मानवता सभी धर्म, पंत एवं मजहब के लिए अनिवार्य है। मानवता को लेकर किसी भी धर्म, पंत एवं मजहब में मतभेद नहीं होना चाहिए। ये मनुष्यता का मूल है और मनुष्यता के मूल से ही हमें धार्मिकता और आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर होने में मदद मिलती है और मदद मिलेगी।

आध्यात्मिकता और धार्मिकता में अन्तर

1. आध्यात्मिकता में मनुष्य स्वयं का आत्म मंथन करने का प्रयास करता है।	1. धार्मिकता में अपने धर्म को सर्वोपरि मानकर दैविक शक्तियों में विश्वास अधिक करता है।
2. आध्यात्मिकता में बाहय आडम्बर नहीं होता, सादगी पूर्ण ढंग से ईश्वर की उपासना की जाती है।	2. धार्मिकता में बाहय दिखावा अधिक होता है लेकिन वह श्रद्धालुओं की भावनाओं से जुड़ा होता है।
3. आध्यात्मिकता एकेश्वरवाद पर आधारित होती है। जो सिर्फ एक ईश्वर एक शक्ति को मानती है।	3. धार्मिकता में श्रद्धालु किसी एक ईष्ट की पूजा अर्चना करता है। लेकिन सभी दैविक शक्तियों को मानता एवं सम्मान करता है।
4. आध्यात्मिकता में मनुष्य लोभ, मोह, माया, अहंकार से दूरी बनाकर ईश्वरीय शक्ति का अनुभव करने के लिए अनुशासित रहता है।	4. धार्मिकता में मनुष्य दैविक शक्तियों एवं ईश्वरीय शक्ति की ओर आकर्षित तो होता है लेकिन पूर्ण रूप से अनुशासित नहीं रह पाता। लोभ, मोह, माया, अहंकार के कुछ लक्षण दिखाई देते हैं।
5. आध्यात्मिकता ईश्वर के अनुभव करने का शांतिपूर्ण मार्ग है।	5. धार्मिकता में ध्वनि प्रदूषण आदि की संभावना अधिक रहती है।

आध्यात्मिकता और मानवता में अन्तर

1. आध्यात्मिकता एकांत प्रिय एवं मौन होती है।	1. मानवता सामाजिकता से जुड़ी हुई होती है।
2. अलग-अलग धर्म के लोग अध्यात्म का अलग-अलग तरीके से चिंतन और मनन करते हैं।	2. मानवता सभी धर्म एवं पंतों को समान रूप से देखती और सम्मान करती है।
3. आध्यात्मिकता स्वयं से जुड़ने का एक बहुत ही सुन्दर मार्ग है।	3. मानवता समाज से जुड़ने का एक बहुत ही सुन्दर मार्ग है।
4. आध्यात्मिकता में मनुष्य स्वयं में ईश्वर की खोज करने का प्रयास करता है।	4. मानवता में मनुष्य प्रत्येक मनुष्य में ईश्वर की झलक देखता है।
5. आध्यात्मिकता में ईश्वरीय शक्ति का अनुभव करके मनुष्य स्वयं आनन्दित होता है।	5. मानवता में मनुष्य दूसरों को आनन्दित देखना पसन्द करता है।

धार्मिकता और मानवता में अन्तर

1. धार्मिकता किसी विशेष समुदाय, पन्त अथवा धर्म से सम्बन्ध रखती है।	1. जबकि मानवता किसी विशेष समुदाय, पन्त अथवा धर्म से सम्बन्ध नहीं रखती मानवता में सबको समान सम्मान दिया जाता है।
2. धार्मिकता में जो जिस धर्म से होता है वह उसी धर्म के ईष्ट की पूजा-पाठ एवं प्रचार-प्रसार करता है।	2. मानववादी मनुष्य अपने धर्म की स्तुति, पूजा-पाठ तो करता ही है सभी धर्मों, पन्तों को समान सम्मान देकर मानवता को सर्वोपरि मानता है।
3. धार्मिक मनुष्य अपने धर्म की प्रशंसा करता है एवं दूसरे धर्मों में विभिन्न प्रकार की कमियां निकालता है एवं आलोचना करता।	3. मानववादी मनुष्य सभी धर्मों की प्रशंसा करता है। वह किसी भी धर्म का उपहास एवं आलोचना नहीं करता।
4. धार्मिकता में धर्म की जय का उद्घोष किया जाता है।	4. मानवता में मानवता की जय का उद्घोष किया जाता है।
5. धर्म किसी प्रांत अथवा देश से सम्बन्ध रखता है।	5. मानवता सारे विश्व से सम्बन्ध रखती है।

मानव जीवन में पथप्रदर्शक की भूमिका

जीवन जितना साधारण है, उतना ही असामान्य भी है। यदि हम किसी की परवाह न करें, नैतिक मूल्यों को न अपनाएं, मर्यादाओं का ध्यान न रखें तो हमारे लिए मनुष्य जीवन, एक खाने-पीने एवं मौज मस्ती का साधन है। सिर्फ इस शरीर को जीवित रखना ही हमारा लक्ष्य है। न हमें इस बात की परवाह एवं चिंता है कि हमारा जन्म क्यों हुआ ? हमें ईश्वर ने इस मृत्युलोक में क्यों भेजा है ? न हमें इस बात का ज्ञान है कि ये प्रकृति क्यों बनाई है ? इस प्रकृति का महत्व क्या है? पशु पक्षी क्यों बनाएं हैं ? सिर्फ और सिर्फ कच्चा-पक्का, अच्छा-बुरा जैसा भी है सिर्फ पेट भर जाए और इस नश्वर शरीर को आराम मिल जाए। साधारण मनुष्य कुछ भी जानने का प्रयास ही नहीं करता और जो जानता है वह बताना नहीं चाहता।

साधारण मनुष्य जानना नहीं चाहता और जो जानते हैं उनमें से अधिकतर के अन्दर अहं भाव आ जाता है। इसलिए समाज में अज्ञानी मनुष्यों की संख्या अधिक है। असाधारण मनुष्य एक शिल्पकार की भूमिका निभाता है। एक अच्छा शिल्पकार राह में पड़े पत्थर को भी तरांश कर भगवान का रूप दे सकता है। लेकिन जब वह ये जिम्मेदारी समझे ।

।। पत्थर की आत्मकथा ।।

अपनी मुझे सुधबुध न थी,मूक था जीवन मेरा।
सपने थे आंखों में लेकिन, सूना था आंगन मेरा।।

चोट दी मुझको हथौड़े, की जब शिल्पकार ने,
उस प्रभु को आत्मा, मेरी लगी पुकारने,
रूप जब गढ़ के मेरा, नाम श्याम का दिया,
धन्यवाद मैंने उस, शिल्पकार का किया,
मार खाके शिल्पकार, की जब झेले मैंने दुख,
तब पता मुझको चला, कष्टों की ओट में है सुख,
है धन्य शिल्पकार जिसने,बदला ये जीवन मेरा।
अपनी मुझे सुधबुध न थी, ... ।।

बांधकर चीरा पहन, पौशाक सेठ आ गया,
रूप ये मेरा सलोना, सेठ के मन भा गया,
सेठ के मनभाव जब, पहचाने शिल्पकार ने,
मुंह मांगा मूल्य लिया, फिर उससे शिल्पकार ने,
सेठ ने मंदिर में रख, फिर की मेरी स्थापना,
बिन नहाए, धोए कर दिया, था मुझे छूना मना।
भाग्य बदला है जिसने शत-शत, उसे नमन मेरा।
अपनी मुझे सुधबुध न थी, ... ।।

पूजा अर्चना मेरी, होने लगी मंदिर में जब,
ज्ञान का चक्षु खुला, हृदय के अंदर में तब,
जीवन में पथप्रदर्शक का, महत्व है क्या जाना मैं,
चोट खा हथौड़े की, स्वयं को पहचाना मैं,
दुख की घटाओं से ही, सुख का बरसता अमृत,
संघर्ष करता रह बस, बाधाओं से तू डर मत,
संग-संग नमन उन्हें, जिन्होंने सींचा है बचपन मेरा।
अपनी मुझे सुधबुध न थी, ... ।।

उपरोक्त पद्य के माध्यम से समझाने का प्रयास किया गया है कि, हमारे मनुष्य जीवन में हमें गुरुओं एवं मार्गदर्शकों की विशेष आवश्यकता होती है। जिनके मार्गदर्शन में हम अपने अनमोल जीवन को धन्य बना सकते हैं।

हम स्वयं को जान सकते हैं, प्रभु को पहचान सकते हैं। हम इस मृत्युलोक में क्यों आए हैं? हमारे मनुष्य जीवन का क्या उद्देश्य होना चाहिए?

हम सजीव एवं निर्जीव में अन्तर स्पष्ट कर सकें, हम ईश्वर के साकार एवं निराकार रूप का अनुभव कर सकें, हम माया, मोह, लोभ और अहंकार को कम कर सकें। हमारा जीवन गंगाजल की तरह पवित्र कैसे बने ? हम साधारण मनुष्यों को जीवन जीने की कला कैसे सिखा सकते हैं अथवा बता सकते हैं? गुरुओं एवं मार्गदर्शकों के माध्यम से हमें ये पता चलता एवं अनुभव होता है कि, हमारा

अपना मूल्य क्या है और ये हमारे जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

इसमें सबसे पहली भूमिका होती है हमारे जन्मदाता माता एवं पिता जो हमारे प्रथम गुरू एवं मार्गदर्शक होते हैं। उसके बाद हमारे शैक्षिक गुरू एवं मार्गदर्शक होते हैं, जो हमें दुनिया में कैसे आगे बढ़ना है, कैसे अपनी बौद्धिक क्षमता को प्रखर करना है एवं सामाजिक, पारिवारिक दायित्वों को निभाना है और अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार करना है। हमारे धार्मिक गुरू एवं मार्गदर्शक हमें अपने धर्म से परिचय कराते हैं। कि हमारी धार्मिक मर्यादाएं क्या हैं? कैसे हमें धार्मिक मर्यादाओं में रहकर अपना जीवनयापन करना है? कैसे हमें अपने धर्म की रक्षा करनी है? कैसे हम धर्म पर चलकर अपने अंतःकरण को निर्मल एवं पावन बना सकते हैं। धार्मिक गुरू एवं मार्गदर्शक हमें हमारे ईष्ट एवं दैविक शक्तियों के बारे में अवगत कराते हैं।

धार्मिक गुरूओं एवं मार्गदर्शकों के बाद हमें हमारे आध्यात्मिक गुरू एवं मार्गदर्शक हमें उस सच्चाई के बारे में बताते एवं अवगत कराते हैं, जिससे हम दुनिया के आकर्षण की चकाचौंध के कारण जान नहीं पाते और बस यूं ही इस जीवन के अनमोल एक-एक पल को गंवाते रहते हैं।

आध्यात्मिक गुरू हमारी स्वयं से पहचान कराते हैं, ये शरीर, ये संसार नश्वर है ये बोध कराते हैं। कैसे हम भवसागर से पार उतर सकते हैं, इसका सुगम रास्ता सुझाते हैं। लख चौरासी क्या होती है, इसका ज्ञान कराकर, इससे कैसे छुटकारा पाना है अथवा निवृत्त होना है, इससे अवगत कराकर कैसे परम गति को प्राप्त होना है। ये सब आध्यात्मिक गुरू एवं मार्गदर्शकों का दायित्व है।

आध्यात्मिक प्रकाश स्तम्भ आदि गुरु शंकराचार्य-चेतनादित्य आलोक

आदि शंकराचार्य अद्वैत वेदान्त के प्रणेता, महाज्ञानी जगत गुरू विलक्षण भाषायी प्रतिभा के धनी, संस्कृत साहित्य के प्रकांड विद्वान, उपनिषद् के व्याख्याता, वेदों के विशिष्ट प्रवक्ता, सनातन धर्म के रक्षक और प्रचारक, हिन्दु संस्कृति के चमकते सितारे, भारत के गौरव एवं आध्यात्मिकता के प्रकाश स्तम्भ हैं।

आदि गुरू शंकराचार्य का जन्म दक्षिण भारत स्थित केरल राज्य के नम्बूदरीपाद ब्राह्मणों के गांव, कालड़ी के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था।

इनके पिता का नाम शिव गुरू एवं माता का नाम आर्याम्बा था। इनके जन्म के कुछ बर्षों बाद ही इनके पिता का निधन हो गया। ये बचपन से ही अत्यन्त प्रतिभा संपन्न थे। इन्होंने अल्पायु में ही वेदों को कंठस्थ कर इनमें महारथ प्राप्त कर लिया था।

दो वर्ष की आयु में ही धारा प्रवाह संस्कृत बोल सकते थे और लिख सकते थे। तीन वर्ष की आयु में इन्होंने मलयालम का ज्ञान प्राप्त कर लिया था और चार वर्ष की आयु में ये वेदों का सांगोपांग पाठ करने लगे थे। यही नहीं बारह वर्ष की आयु होते ही इन्होंने सन्यास ग्रहण कर लिया था। इतनी छोटी आयु में ही इनके अनेक शिष्य बन गए, जिनके साथ इन्होंने अध्यात्म विज्ञान को पुनःस्थापित करने हेतु देश भर का भ्रमण किया।

आदि गुरू शंकराचार्य के जन्म को लेकर विद्वानों के बीच मतभेद हैं। कुछ विद्वान इनका जन्म समय 788 ई. मानते हैं, जबकि महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुसार आदि गुरू शंकराचार्य का जन्म वास्तव में 508 ई. पूर्व में हुआ था। आदि गुरू शंकराचार्य ने मात्र 32 वर्ष की आयु में ही अपना शरीर त्याग दिया था। किन्तु इनके सम्बन्ध में जिस सर्वाधिक बात की चर्चा होनी चाहिए वह यह है कि महज 32 वर्ष की आयु में ही इन्होंने इतने कार्य कर डाले, जितने कि सामान्यतः लोग 100 वर्ष की अवधि में भी नहीं कर पाते।

शास्त्रीय मान्यता के अनुसार सन्यास ग्रहण करने के उपरांत यानि 12 वर्ष से लेकर 32 वर्ष की आयु तक महज 20 वर्षों की अवधि में इन्होंने सम्पूर्ण भारत की उत्तर से दक्षिण और पूरब से पश्चिम तक की कई यात्राएं की। सबसे बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि राष्ट्र भ्रमण करते हुए ही इन्होंने

हजारों पृष्ठों के साहित्य की रचना भी कर ली थी।

उल्लेख है कि केरल से पदयात्रा करते हुए ये काशी तक पहुंचे, जहां पर इन्होंने योग शिक्षा और अद्वैत ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति की। शंकराचार्य जी बिहार के मिथिला भी पहुंचे, जहां इन्होंने 16 दिनों तक मंडन मिश्र के साथ शास्त्रार्थ किया, इस शास्त्रार्थ का निर्णायक मंडन मिश्र की पत्नी भारती को बनाया गया था। आदि गुरू शंकराचार्य ने ही देश के चारों कोणों में बद्रिकाश्रम, श्रंगेरीपीठ, द्वारका शारदा पीठ, पुरी गोवर्धन पीठ की स्थापना की। आदि गुरू शंकराचार्य ने ही दसनामी सम्प्रदाय की भी स्थापना की। इनके द्वारा प्रतिपादित दर्शन को 'अद्वैत वेदान्त' का दर्शन कहा जाता है।

तार्किक विश्लेषण

आध्यात्मिकता का बहुत ही व्यापक स्वरूप एवं विशाल स्वरूप है। आध्यात्मिकता समस्त संसार के लिए जरूरी है और सर्व हिताय है। आध्यात्मिकता संसार की एवं मानव जीवन की मूल है, यही मानव जीवन का आधार है, आध्यात्मिकता आदि भी है अन्त भी है। आध्यात्मिकता के माध्यम से हम स्वयं को जान सकते हैं, ब्रह्म को जान सकते हैं, अपने ज्ञान का विस्तार कर सकते हैं, समाज को जाग्रत कर प्राणियों में नीति पूर्ण धर्म पर चलने की जिज्ञासा पैदा कर सकते हैं।

आध्यात्मिकता का विश्लेषण विश्व में देश स्तर पर, भाषा के आधार पर, जाति और और धर्म के आधार पर अलग-अलग तरीके से एवं रूप में किया गया है। अध्यात्म को अलग-अलग विद्वानों ने, मनीषियों ने, महापुरुषों ने अपने अलग-अलग तर्क देकर परिभाषित किया है। जबकि सभी विद्वानों, मनीषियों एवं महापुरुषों का मूल एक ही है।

उपरोक्त कथनानुसार धर्म का भी बहुत व्यापक एवं विशाल स्वरूप है। आध्यात्मिकता के जैसे ही धर्म को भी देश, जाति, मजहब एवं धर्म के आधार पर भिन्न-भिन्न धार्मिक गुरूओं ने भिन्न-भिन्न रूप में धर्म को परिभाषित किया है। लेकिन मूल सबका वही है, अपने धर्म का पालन कर अपने को बढ़ावा देना एवं स्वयं को कृतार्थ करना कृतार्थ समझना इत्यादि।

आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता मनुष्य जाति के लिए सामान्य हैं। इन तीनों को संसार के सारे मनुष्य अपने-अपने देश, जाति, मजहब, धर्म के अनुसार अपनाते हैं, जीते हैं एवं इसका अनुसरण करते हैं।

मानवता को भी विद्वानों, मनीषियों एवं महापुरुषों ने अलग-अलग रूप में परिभाषित किया है एवं इसका अलग-अलग स्वरूप प्रकट किया है। लेकिन आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता तीनों ही मानव कल्याण के लिए सर्वोपरि हैं। इन्हीं तीनों के कारण संसार में तालमेल एवं सामंजस्य बना हुआ है। इन्हीं तीनों के कारण हम एक दूसरे के सहयोगी बनते हैं। यदि यह तीनों न होते तो, पशुवृत्ति हमारे अंदर विद्यमान होती और हम एक दूसरे को घृणा की दृष्टि से देखते, हमारे जीने का तरीका पशुओं के समान होता, पशुओं में और हममें कोई विशेष अन्तर नहीं होता।

संसार में जो मनुष्य आज भी आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता से नहीं जुड़ा हुआ, वह आज भी पशुओं जैसा व्यवहार करता है। मन में छल, कपट, द्वेषभाव और हिंसात्मक व्यवहार करता है। ऐसे मनुष्य समाज के लिए अभिशाप हैं। क्योंकि वह मानसिक, शारीरिक और आर्थिक रूप से समाज को हानि पहुंचाते हैं।

भिन्न-भिन्न विद्वानों एवं महापुरुषों के आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता पर भिन्न-भिन्न विचार हैं।

आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता पर स्वामी विवेकानंद के विचार एवं तर्क –

स्वामी विवेकानंद आध्यात्मिक गुरू थे, जिन्होंने अपनी रचनाओं अपने ज्ञान आदि के माध्यम से मानव जीवन को अद्वैत सीख दी है। स्वामी विवेकानंद जी जिज्ञासु प्रवृत्ति वाले व्यक्ति थे, इसी जिज्ञासा के कारण वह महर्षि देवेन्द्रनाथ जी की सलाह पर रामकृष्ण परमहंस से मिले थे और उन्हें अपना गुरू बना लिया था। स्वामी विवेकानंद ने धार्मिक परम्पराओं पर एक नई दृष्टि दी थी। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों को मिटाने के साथ-साथ धार्मिक रचनाओं को सही अर्थ में समझाया था।

☛ 'यदि ईश्वर है तो हमें उसे देखना चाहिए, अन्यथा उस पर विश्वास न करना ही अच्छा है। ढोंगी बनने की अपेक्षा स्पष्ट राय से नास्तिक बनना अच्छा है।'

☛ 'कोई भी जीवन असफल नहीं हो सकता, संसार में असफल कही जाने वाली कोई वस्तु है ही नहीं। सैंकड़ों बार मनुष्य को चोट पहुंचती है, हजारों बार वह पछाड़ खा सकता है, अन्त में वही यह अनुभव करेगा कि वह स्वयं ही ईश्वर है।'

☛ 'एकमात्र ईश्वर आत्मा है और आध्यात्मिकता ही सत्य है, शक्ति स्वरूप है। केवल उन्हीं का आश्रय लो।'

☛ 'हमें आज जिस बात को जानने की आवश्यकता है, वह है ईश्वर, हम उसे सर्वत्र देख और अनुभव कर सकते हैं।'

☛ 'संसार में अनेक धर्म हैं, यदपि उनकी उपासना के नियम भिन्न हैं, तथापि वे वास्तव में एक ही हैं।'

☛ 'मैं उस धर्म में विश्वास नहीं करता जो विधवा के आँसू पोंछने या अनाथों को रोटी देने में असमर्थ है।'

☛ 'स्वार्थ ही अनैतिकता और स्वार्थहीनता ही नैतिकता है।'

☛ 'तुम्हें अन्दर से बाहर की ओर विकसित होना है। कोई तुम्हें पढ़ा नहीं सकता, कोई तुम्हें आध्यात्मिक नहीं बना सकता। तुम्हारी आत्मा के अलावा कोई गुरू नहीं है।'

☛ 'भला हम भगवान को खोजने कहां जा सकते हैं ? अगर उसे अपने हृदय और जीवित प्राणी में नहीं देख सकते।'

☛ 'बाहरी स्वभाव अन्दरूनी स्वभाव का बड़ा रूप है।'

☛ 'सत्य को हजार तरीकों से बताया जा सकता है, फिर भी हर एक सत्य ही होगा।'

☛ 'जब तक आप स्वयं पर विश्वास नहीं करते, तब तक आप भगवान पर विश्वास नहीं कर सकते।'

☛ 'किसी की निन्दा न करें यदि आप मदद के लिए हाथ बढ़ा सकते हैं, तो जरूर बढ़ाएं, अगर नहीं बढ़ा सकते, तो अपने हाथ जोड़िए, अपने भाईयों को आशीर्वाद दीजिए और उन्हें मार्ग पर जाने दीजिए।'

☛ 'उठो, जागो और तब तक नहीं रूको, जब तक लक्ष्य न प्राप्त हो जाए।'

आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता पर पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी के विचार एवं तर्क-

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य ने सारा साहित्य लोगों के मन की भ्रांतियों, अंधविश्वासों और अंधरिवाजों को समाप्त करने के ध्येय से रचा।

इनका मुख्य नारा था, 'हम बदलेंगे, युग बदलेगा, हम सुधरेंगे, युग सुधरेगा।'

विचारों के परिवर्तन से क्रांति का सूत्रपात -

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य का साहित्य और उनका जीवन विचारों को प्रज्ज्वलित करने और स्वयं को बदलने की प्रेरणा देता है, उनके साहित्य और सूत्र वाक्यों को पढ़ना हमें चेतना से भरता है। जैसे वह एक जगह लिखते हैं।

'जो बात अनुचित है, हृदय में अनुचित ही मानिए,
आप इसका त्याग नहीं कर पा रहे हैं, ये अलग बात है।'

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य का आध्यात्मिक राष्ट्रवादी चिंतन-

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य आध्यात्मिक राष्ट्रवाद को आदर्श राज्य के रूप में प्रस्तुत करते हैं और यही आदर्श राज्य 'स्वराज्य' का रूप लेता है। आचार्य जी कहते हैं कि मनुष्य जाति का संयुक्त विकास व्यक्ति-व्यक्ति के बीच, व्यक्ति और समाज के बीच, व्यक्ति और समुदाय के बीच, छोटे जन समाज और समूची मनुष्य जाति के बीच, मनुष्य जाति के सामान्य जीवन और उसकी चेतना के बीच तथा उसके स्वतंत्र रूप में विकसित हुए सामाजिक एवं व्यक्तिगत अंगों के बीच आदान प्रदान एवं आत्मसातकरण के सामान्य सिद्धांत द्वारा सिद्ध किया जाएगा।

पंडित श्रीराम शर्मा एक प्रखर राष्ट्रवादी थे। उन्होंने अपने विचारों में राष्ट्र का विकास मानव एकता के आदर्श की ओर उन्मुख होना चाहिए, इस विचार को भी स्वीकार किया। प्रकृति की सामान्य योजना

असीम विविधता पर आधारित होती है। इसलिए आदर्श समाज में वैयक्तिक, राष्ट्रीय, धार्मिक, सामाजिक और नैतिक सब प्रकार की स्वाधीनता आवश्यक है। आचार्य जी लिखते हैं, 'स्वाधीनता से अभिप्राय है अपनी सत्ता के नियमों के अनुसार चलना अपनी स्वभाविक आत्म परिपूर्णता तक विकसित होना और अपने वातावरण के साथ स्वभाविक एवं स्वतंत्र रूप में समरसता प्राप्त करना।'

पंडित श्रीराम शर्मा के अनुसार राष्ट्रवाद आध्यात्मिकता पर आधारित है। आचार्य जी कहते हैं मानव एकता के आदर्श को स्वीकार करना चाहिए कि, अध्यात्मवाद ही इकलौता सुरक्षा कवच है तथा राजनैतिक रूप से महान बनने और उन्मुक्ति प्राप्त करने हेतु महान और उन्मुक्त होना चाहिए।

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य कहते हैं, राष्ट्रीयता एक आध्यात्मिक बल है जो सदैव विद्यमान रहती है और इसमें किसी भी प्रकार का क्षरण नहीं होता।

आचार्य जी राष्ट्रवाद को सच्चा धर्म मानते थे। राष्ट्रवाद महज एक राजनैतिक कार्यक्रम नहीं है, बल्कि राष्ट्रवाद एक धर्म है, जिसका स्रोत ईश्वर है।

आचार्य जी कहते हैं कि पूर्ण समाज, अपूर्ण व्यक्तियों द्वारा नहीं बन सकता और बिना अध्यात्म के व्यक्ति की पूर्णता संभव नहीं है। आचार्य जी ने जिस राष्ट्रवाद की बात की, उसमें किसी प्रकार का द्वेष, खिन्नता, कड़वाहट या आक्रामकता नहीं है। आध्यात्मिकता पर आधारित 'मानव एकता के आदर्श' को यह बात स्वीकार करनी चाहिए कि अध्यात्मवाद ही इकलौता सुरक्षा कवच है।

पंडित श्रीराम शर्मा के क्रान्ति धर्मी साहित्य-

1. शिक्षा ही नहीं विद्या भी ।
2. भाव संवेदना की गंगोत्री ।
3. संजीवनी विद्या का विस्तार ।
4. महिला जाग्रति अभियान ।
5. परिवर्तन के महान क्षण ।
6. मनःस्थिति बदलो तो परिस्थिति बदले।
7. समयदान ही युग धर्म ।
8. जीवन साधना के स्वर्णिम सूत्र इत्यादि ।

'धर्म से आध्यात्मिक जीवन विकसित होता है, और जीवन समृद्धि का उदय होता है ।

रामकृष्ण परमहंस के आध्यात्मिक, धार्मिक और मानववादी विचार एवं तर्क-

रामकृष्ण परमहंस भारत के महान सन्त थे। इन्होंने सभी धर्मों की एकता पर बल दिया, यह आध्यात्मिक गुरू एवं प्रचारक भी थे। उन्हें बचपन से ही विश्वास था कि ईश्वर के दर्शन हों। अतः ईश्वर प्राप्ति के लिए कठोर साधना एवं भक्ति का जीवन बिताया। स्वामी रामकृष्ण परमहंस मानवता के पुजारी थे। साधना के फलस्वरूप वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि संसार के सभी धर्म सच्चे हैं और उनमें कोई भिन्नता नहीं। वे ईश्वर तक पहुंचने के भिन्न-भिन्न साधन मात्र हैं।

उपदेश एवं वाणी -

रामकृष्ण परमहंस छोटी-छोटी कहानियों के माध्यम से शिक्षा देते थे। कलकत्ता के बुद्धिजीवियों पर उनके विचारों ने जबरदस्त प्रभाव छोड़ा था, हालाकि उनकी शिक्षाएं आधुनिकता एवं राष्ट्र के आजादी के बारे में नहीं थी। उनके आध्यात्मिक आन्दोलन ने परोक्ष रूप से देश में राष्ट्रवाद की भावना बढ़ने का काम किया, क्योंकि उनकी शिक्षा जातिवाद एवं धार्मिक पक्षपात को नकारती है।

रामकृष्ण परमहंस के अनुसार जीवन का सबसे बड़ा लक्ष्य है ईश्वर प्राप्ति। रामकृष्ण परमहंस कहते थे कि कामिनी और कंचन ईश्वर प्राप्ति के सबसे बड़े बाधक हैं। रामकृष्ण परमहंस की जीवनी के अनुसार, वे तपस्या, सत्संग और स्वाध्याय आदि आध्यात्मिक साधनों पर विशेष बल देते थे। वे कहा करते थे 'यदि आत्म ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा रखते हो, तो पहले अहंभाव दूर करो। क्योंकि जब तक अंहकार दूर न होगा, अज्ञान का परदा कभी न हटेगा। तपस्या, सत्संग और स्वाध्याय आदि साधनों से अंहकार दूर कर आत्मज्ञान प्राप्त करो, ब्रह्म को पहचानों।'

रामकृष्ण परमहंस संसार को माया के रूप में देखते थे। उनके अनुसार अविद्या, माया सृजन की काली शक्तियों को दर्शाती है, जैसे- काम, लोभ, लालच, क्रूरता, स्वार्थी कर्म आदि। यह मानव को चेतना के निचले स्तर पर रखती है। यह शक्तियां मनुष्य को जन्म और मृत्यु के चक्र में बंधने के लिए जिम्मेदार हैं। जैसे - निःस्वार्थ कर्म, आध्यात्मिक गुण, ऊंचे आदर्श, दया, पवित्रता, प्रेम और भक्ति। यह मनुष्य को चेतन के ऊंचे स्तर पर ले जाती है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के आध्यात्मिक, धार्मिक और मानववादी विचार एवं तर्क –

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी मूल रूप से एक धार्मिक चिंतक अथवा धर्म के प्रवर्तक थे। उनके प्रमुख धार्मिक विचार निम्नलिखित हैं।

एकेश्वरवाद तथा ईश्वर के निराकार स्वरूप में आस्था, दयानन्द जी की ईश्वर में निष्ठा थी। उन्होंने बताया कि वेदों ने ईश्वर को अद्वितीय अर्थात् एक ही बताया है। दूसरा ईश्वर होने का निषेध किया है। दयानन्द जी के अनुसार सृष्टि के तीन मूल कारण ईश्वर, जीव एवं प्रकृति हैं। ये तीनों सृष्टि के अनादि कारण हैं। ये तीनों अनन्त भी हैं अर्थात् इनका कभी अन्त नहीं होता है। इस प्रकार ये तीनों ही सत्य हैं। दयानन्द जी ने ईश्वर को सृष्टि का निर्माण, पालन एवं संहारकर्ता बताया है। एकेश्वरवाद तथा ईश्वर के निराकार स्वरूप में सहज आस्था होने के कारण दयानन्द जी ने हिन्दू धर्म में प्रचलित बहुदेववाद और अवतारवाद का घोर विरोध किया तथा इन्हें वेद विरुद्ध, अप्रमाणिक व विकृत प्रवृत्तियां बतलाया।

मूर्ति पूजा का विरोध–

दयानन्द जी ने मूर्ति पूजा को जड़ पूजा कहा है, क्योंकि वे मूर्ति पूजा के स्वभाविक विरोधी थे। दयानन्द जी के अनुसार मूर्ति पूजा वेद विरूद्ध है तथा इसका कोई प्रमाणिक एवं तार्किक आधार नहीं है। दयानन्द जी ने मूर्ति पूजा में निम्नलिखित दोष बताएं हैं।

मूर्ति पूजा नास्तिक कर्म है। मूर्ति पूजा के द्वारा आध्यात्मिक एकता की प्राप्ति असंभव है। मूर्ति में ईश्वर की प्राण प्रतिष्ठा की धारणा मूर्खतापूर्ण है। भक्त श्रद्धापूर्वक अपनी चेतना को मूर्ति के आगे अर्पित कर देता है और उसकी बुद्धि जड़ हो जाती है। मूर्ति पूजा से एक ही धर्म के अनुयायियों में धार्मिक मतभेद एवं अज्ञान की वृद्धि होती है। मूर्ति पूजा से भ्रमित व्यक्ति देश देशांतर के मंदिरों की यात्रा करते हैं और दुःख पाते हैं। मूर्ति पूजा पर्यावरण के लिए हानिकारक है। इन सब कारणों से दयानन्द जी ने मूर्ति पूजा का विरोध किया है।

सार्वभौमिक धर्म का समर्थन–

दयानन्द जी ने मानव मात्र के कल्याण के लिए सार्वभौमिक धर्म की धारणा पर बल दिया है, जिसे उन्होंने 'सर्वतन्त्र सिद्धांत' अथवा 'सनातन नित्य धर्म' कहा है। उनकी मान्यता के अनुसार धर्म वह है

जो तीनों कालों में एक जैसा मान्य योग्य हो। धर्म वह है जिसे सत्यमानी, सत्यवादी, परोपकारी विद्वान मानते हों, वही सबको स्वीकार हो। दयानन्द जी ने जीवन के प्रति मनुष्य के मर्यादित और संतुलित दृष्टिकोण को ही धर्म की संज्ञा दी है।

वेद एवं उनके अनुपूरक ग्रन्थों को ही मान्यता-

दयानन्द जी ने वेदों के महत्व को प्रकट करते हुए कहा है कि वेद सब सत्य विधाओं की पुस्तक है, वेद को पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

ओशो रजनीश के आध्यात्मिक, धार्मिक और मानववादी विचार एवं तर्क-

बीसवीं सदी के महान विचारक तथा आध्यात्मिक गुरू ओशो रजनीश ने वर्तमान में सभी प्रचलित धर्मों को पाखंड बताकर दुनियाभर के लोगों से दुश्मनी मोल लेली थी। दुनिया को एकदम नये विचारों से हिला देने वाले, बौद्धिक जगत में तहलका मचा देने वाले भारतीय गुरू ओशो से पश्चिम की जनता इस कदर प्रभावित हुई कि भय से अमेरिका की रोनाल्ड रीगन सरकार ने उन्हें गिरफ्तार करवाकर जेल में डाल दिया था और बाद में अंतरराष्ट्रीय षड्यंत्र के तहत उनको जहर देकर छोड़ दिया गया। ओशो ने सैंकड़ों पुस्तकें लिखीं, हजारों प्रवचन दिये। उन्होंने अपने क्रांतिकारी विचारों से दुनियाभर के वैज्ञानिकों, बुद्धिजीवियों और साहित्यकारों को प्रभावित किया।

गाँधी का विरोध -

ओशो ने अपने अधिकतर प्रवचनों में गांधी जी की विचारधारा का विरोध किया है। उनका मानना था कि यह विचारधारा मनुष्य को पीछे ले जाने वाली विचारधारा है। यह आत्मघाती विचारधारा है।

ओशो कहते हैं, गांधी जी गीता को माता कहते हैं, लेकिन गीता को आत्मसात नहीं कर सके। क्योंकि गांधी की अहिंसा युद्ध की संभावनाओं को कहां रखेगी, कृष्ण की बात गांधी को कैसे समझ में आ सकती है? क्योंकि कृष्ण उसे समझाते हैं कि तू लड़ और लड़ने के लिए जो तर्क देते हैं, वह ऐसा अनूठा है, जो कि इसके पहले कभी नहीं दिया गया था। उस तर्क को परम अहिंसक ही दे सकता है। ओशो कहते हैं कृष्ण मेरी दृष्टि में परम अहिंसक हैं।

नव सन्यास –

वर्ष 1970 में मनाली के एक ध्यान शिविर में 'श्रीकृष्ण मेरी दृष्टि में' प्रवचन माला के साथ-साथ ओशो के 'नव सन्यास' आन्दोलन का सूत्रपात हुआ।

इस दौरान ओशो ने दुनियाभर के धर्मों में प्रचलित सन्यास से भिन्न एक नये तरह के सन्यासी होने का विषय रखा।

ओशो ने एक हंसते खेलते अभिनव सन्यास की प्रस्तावना। इस सन्यास में कोई त्याग और पलायन नहीं है, बल्कि ध्यान द्वारा स्वयं को रूपांतरित करके जीवन को और सुन्दर एवं सृजनात्मक बनाने की भावना है। संसार में रहते हुए संसार का न होना, कमलवत जीना, अतीत की स्मृतियों और भविष्य की कल्पनाओं से निर्भय होकर क्षण-क्षण होश में जीना ओशो का नव सन्यास है।

इस नव सन्यास में सन्यासी को कोई भगवा या गेरुए वस्त्र पहनने की जरूरत नहीं, माला और नियमों का पालन करने की जरूरत नहीं, पूजा-पाठ, ईश्वर प्रार्थना करने की जरूरत नहीं। बस प्रतिदिन ध्यान करने की शर्त है। ओशो की नजर में सन्यासी वह है, जो अपने घर संसार, पत्नी और बच्चों के साथ रहकर पारिवारिक, सामाजिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए ध्यान और सत्संग का जीवन जिये। ओशो की दृष्टि में यह एक सन्यास है, जो इस देश में हजारों वर्षों से प्रचलित है।

ओशो कहते हैं कि आपने घर परिवार छोड़ दिया, भगवा वस्त्र पहन लिए, चल पड़े जंगल की ओर। वह सन्यास तो त्याग का दूसरा नाम है, वह जीवन से भगोड़ापन है, पलायन है और एक अर्थ में आसान भी है, अब है कि नहीं, लेकिन कभी अवश्य आसान था। वह सन्यास इसलिए भी आसान था कि आप संसार से भाग खड़े हुए तो संसार की सब समस्याओं से मुक्त हो गए, क्योंकि समस्याओं से कौन मुक्त नहीं होना चाहता? लेकिन जो लोग संसार को त्यागने की हिम्मत न जुटा सके, मोह में बंधे रहें, उन्हें त्याग का यह कृत्य बहुत महान लगने लगा।

जीवन को आत्म अज्ञान के बिन्दु से देखना संसार है, आत्मज्ञान के बिन्दु से देखना सन्यास है।

सन्यास का अर्थ है –

यह बोध कि मैं शरीर ही नहीं हूं, आत्मा हूं। इस बोध के साथ ही भीतर आसक्ति और अज्ञान नहीं

रह जाता है। संसार बाहर था, अब भी वह बाहर होगा, पर भीतर उसके प्रतिराग शून्यता होगी, या यूं कहें कि संसार अब भीतर नहीं होगा।

जोरबा टू बुद्ध –

ओशो कहते हैं कि 'जोरबा' का अर्थ होता है, एक भोग-विलास में पूरी तरह डूबा हुआ व्यक्ति और बुद्ध का अर्थ निर्वाण पाया हुआ। जोरबा केवल शुरूआत है। यदि तुम अपने जोरबा के पूर्ण रूपेण होने अभिव्यक्त होने की स्वीकृति देते हो, तो तुम्हें कुछ बेहतर, कुछ उच्चतर सोचने के लिए बाध्य होना पड़ेगा। वह मात्र वैचारिक चिंतन से पैदा नहीं हो सकता, वह तुम्हारे अनुभव से जन्मेगा। गौतम बुद्ध स्वयं इसलिए बुद्ध हो पाए, क्योंकि वह 'जोरबा' की जिंदगी खूब अच्छी तरह जी चुके थे।

ओशो कहते हैं कि दरिद्र को 'नारायण' कहने से ही इस देश में दरिद्रता फैल गई है। यदि आप गरीबी और दरिद्रता को सम्मान देंगे तो आप उससे कभी भी मुक्त नहीं हो सकते। मेरा सन्यासी ऐसा होना चाहिए कि वह पहले धन पर ध्यान दे फिर ध्यान की चिंता करे।

ओशो पर आरोप है कि वह सिर्फ अमीरों के गुरू थे। उन्होंने पूंजीवाद को बढ़ावा दिया। उनके पास लगभग सौ रॉल्स रायस कारें थीं। वे कभी गरीबों और गरीबी का पक्ष नहीं लेते थे। सुखी रहने के सूत्र ढूंढो तो समृद्धि स्वतः ही आने लगेगी।

परिवार की कोई जरूरत नहीं–

ओशो का सबसे विवादित विचार है परिवार की परंपरा को समाप्त कर कम्यून की अवधारणा को स्थापित करना। ओशो की नजर में जब विवाह की जरूरत नहीं तो विवाह गौण हो जाता है। हमने सारे परिवार को विवाह के केंद्र पर खड़ा कर दिया है, प्रेम के केंद्र पर नहीं ऐसा ओशो कहते हैं।

हमने ऐसा मान रखा है कि विवाह कर देने से दो व्यक्ति प्रेम की दुनिया में उतर जायेंगे। प्रेम का जन्म होता है स्वतन्त्रता में जहां कोई बन्धन नहीं, कोई मजबूरी नहीं।

धर्मों की कोई जरूरत नहीं –

ओशो कहते हैं कि सदियों से आदमी को विश्वास, सिद्धांत, मत बेचे गए हैं, जो कि एकदम मिथ्या हैं, झूठे हैं जो केवल तुम्हारी महत्वाकांक्षाओं, तुम्हारे आलस्य का प्रमाण हैं। तुम करना कुछ चाहते नहीं और पहुंचना स्वर्ग चाहते हो।

'धर्म की साख पर अधर्म का व्यापार'

-ओशो

'सदियों से तुम्हें झूठे विश्वास बेचे गए हैं'

-ओशो

कोई पंडित पुरोहित नहीं चाहते कि तुम स्वयं तक पहुंचो, क्योंकि जैसे ही तुम स्वयं की खोज पर निकलते हो, तुम सभी तथाकथित धर्मों-हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई के बन्धनों से बाहर आ जाते हो। उस सभी के बाहर आ जाते हो, जो मूढ़ता पूर्ण है और निरर्थक है, क्योंकि तुमने स्वयं का सत्य पा लिया है।

ईश्वर नहीं है-

ओशो कहते हैं कि यदि ईश्वर है तो उसके साथ सभी तरह का पाखंड जुड़ा रहेगा पाप-पुण्य, स्वर्ग-नर्क, अवतारवाद, पैगंबर, चर्च आदि सभी तरह के पाखंड जुड़े रहेंगे। प्राफेट और धर्म ग्रन्थों के बगैर ईश्वर की कल्पना मुश्किल है। ओशो ने ईश्वरवादी और ईश्वर विरोधी दोनों ही विचारधाराओं का विरोध किया।

संभोग से समाधि की ओर-

'संभोग से समाधि की ओर' उनकी चर्चित पुस्तक है, लेकिन इससे कहीं ज्यादा अधिक सेक्स के सम्बन्ध में अन्य दूसरी पुस्तकों में उन्होंने सेक्स को एक अनिवार्य और नैसर्गिक कृत्य बताकर इसका समर्थन किया था।

जबकि आमतौर पर दुनियाभर के धर्म सेक्स का विरोध करते हैं। सन्यास लेना हो या किसी सम्प्रदाय का सन्त बनना हो तो पहली शर्त ही यह है कि ब्रह्मचर्य का पालन करें, लेकिन ओशो के सन्यास की शुरूआत ही भोग से तृप्त होकर मुक्त होने के बाद होती है।

सेक्स का दमन न करें – ओशो

ओशो के सेक्स सम्बन्धी विचारों का विश्वभर के लोगों ने उनके काल में घोर विरोध किया था और आज भी करते हैं। ओशो कहते हैं कि सेक्स पहली सीढ़ी है और समाधि अन्तिम।

वह कहते हैं कि यदि विवाह करना हो तो उसमें कई तरह की बाधा उत्पन्न करो और तलाक के लिए कानून आसान बनाएं। अभी इसका ठीक उल्टा है। विवाह करना आसान है लेकिन तलाक लेना कठिन।

धार्मिक और आध्यात्मिक गुरुओं के तर्कों का आंकलन

यदि हम धर्म गुरूओं, आध्यात्मिक गुरूओं की विचारधाराओं पर ध्यान केन्द्रित करें तो पाएंगे कि मूल सबका एक ही है। बस फर्क है तो सिर्फ इतना कि अपनी-अपनी बात को रखने का तरीका एवं अंदाज अलग है।

जिस प्रकार हिन्दी वर्णमाला के अक्षर वही हैं, जिनसे रामायण भी लिखी गयी, महाभारत भी लिखा गया, गीता भी लिखी गयी, कुरान और बाईबिल भी लिखी गयी।

कहने का तात्पर्य यह है कि इन्हीं शब्दों से अच्छाई भी लिखी गयी और इन्हीं शब्दों से बुराई भी लिखी गयी। ये अपना-अपना नजरिया है कि कौन क्या सोचता है और क्या करता है। सोच और नजरिये पर ही आपका जीवन टिका होता है। उदाहरण के तौर पर देखें तो-

'जैसी शिक्षा,वैसा भविष्य'
'जैसी सोच, वैसी जिंदगी'

कहने का तात्पर्य यह है कि जैसी हमारी शिक्षा हुई है, वैसा ही हमारे भविष्य का निर्माण भी होगा, वैसे ही हम अपने जीवन में कार्यकलाप करेंगे। जैसी हमारी सोच होगी, वैसा ही हमारा जीवन भी होगा। ये सच्चाई है, इसे कोई भी झुठला नहीं सकता, नकार नहीं सकता।

अपनी बात को बड़ी करने एवं मनवाने के लिए, मूल बात को लोग घुमा-फिराकर, उसमें मिर्च-मसाला लगाकर पेश करना चाहते हैं। जिससे आम एवं सामान्य जन का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हो।

कई तर्क और प्रश्न तो करते हैं, लेकिन वह जो प्रश्न व तर्क कर रहे हैं वह उस पर स्वयं चिंतन एवं मनन किये बिना ही सवाल खड़े कर देते हैं। जहां अपने द्वारा किये गये प्रश्नों पर मनन एवं चिंतन किया जाता है, वहां पर तर्क की सम्भावना होती तो है, लेकिन बहुत ही कम। तर्क करना अच्छी बात है, तर्क करना चाहिए, तर्क से ज्ञान में वृद्धि होती है। लेकिन तर्क प्रमाणिक हो, तर्क सकारात्मक हो, जनहित में हो, सामाजिक रूप से नैतिक हो।

जिस प्रकार आप देखेंगे भिन्न-भिन्न धर्मों के विद्वान, महापुरुष एवं मनीषी, सगुण भक्ति को लेकर एक दूसरे पर कटाक्ष करते रहते हैं। जबकि सगुण भक्ति एवं निर्गुण भक्ति का मूल एक ही है, ईश्वर की उपासना, आराधना एवं भक्ति के सभी रास्ते अलग-अलग हैं लेकिन मंजिल तो एक ही है। प्रभु का ध्यान, गुणगान, प्रभु प्रेम इत्यादि। लेकिन मैंने महसूस किया है कि कई ऐसे लोग जिन्हें महानता एवं विद्वान होने का तमगा मिला हुआ है, उनके अन्दर भी अहं भाव देखने को मिला है। जबकि यह सही एवं सामाजिकता के अनुकूल नहीं है।

जो ज्ञान हमारे अथवा किसी के भी पास है, वह हमारा है ही नहीं तो हम उसका अभिमान क्यों करें। जो ज्ञान हमारे पास है वह तो हमने गुरूओं से, समाज से, प्रकृति से प्राप्त किया है। इसका हम कैसे घमंड कर सकते हैं। ज्ञान का घमंड करना तो पाप नहीं महापाप है।

क्योंकि अज्ञानी जन यदि घमंड करे तो समझ आता है, कि वह अज्ञानी है। लेकिन जो स्वयं को ज्ञानी समझता है, विद्वान होने का जिसके पास प्रमाण पत्र है, वह यदि घमंड करे तो समझ से परे है, धिक्कार है ऐसे ज्ञानी जनों को।

इस संसार में न तो तन अपना है न धन अपना है, न ज्ञान अपना है। सब यहीं से प्राप्त किया है यहीं पर सौंप कर जाना है। तो अहंकार अथवा घमंड किस बात का। इसका प्रमाण एक उदाहरण के माध्यम से दिया जाए तो बेहतर है।

वक्त रूठे तो, हालात बदल देता है।
यार गुरबत में, ताल्लुकात बदल देता है।।

किसी मजबूर, बेसहारा, मुफलिस को देखकर,
आदमी खुद व खुद, ख़यालात बदल देता है।

उसे भूलोगे तो, खाक में मिल जाओगे,
वो एक इशारे में, औकात बदल देता है।

ये तन, धन, ज्ञान संसार में जो भी हमें मिला है उस परमपिता परमात्मा, उस प्रभु ने हमें किसी न किसी को माध्यम बनाकर दिया है। जिसको हम स्वयं का समझकर सबसे बड़ी भूल कर रहे हैं। जिसके कारण हम अपने निजी जीवन में अनेकों प्रकार के विवाद, राग, द्वेष, अहंकार इत्यादि पैदा कर लेते हैं। जिसका कोई औचित्य नहीं है। हम यह भूल बैठे हैं कि ईश्वर ने सबसे बलवान यदि बनाया है तो, वह है समय।

उपरोक्त पंक्तियों में समय की महत्वता को बताया गया है। यानि जब समय विपरीत हो तो मित्र भी सम्बन्ध तोड़ देता है। गरीब, असहाय लोगों के प्रति हमारा नजरिया बदल जाता है। लेकिन अन्तर पंक्तियों में साफ-साफ लिखा है। यदि आप उस परमपिता परमात्मा अथवा ईश्वर को भूलोगे तो, समय से पहले मिट्टी में मिल जाओगे। क्योंकि उस प्रभु में इतनी शक्ति है कि वह एक इशारे में अच्छे-अच्छों की औकात बदल देता है।

'इस संसार में प्रत्येक मनुष्य अपनी बात मनवाना चाहता है,
अपनी जिम्मेदारी बहुत कम लोग निभाना चाहते हैं।'

ज्यादातर लोगों की यही मानसिकता है। लेकिन ये दुर्भाग्यपूर्ण है। यदि हम अपनी जिम्मेदारी ईमानदारी पूर्वक निभाएं तो हमारी बात का आम एवं सामान्य जन स्वयं ही अनुकरण करने लगेंगे। लेकिन हम ठीक इसके विपरीत करने का प्रयास करते हैं, जिसका परिणाम नकारात्मक आता है।

'प्रत्येक चीज किसी न किसी सहारे के अपना जीवन पूरा करती है,
क्यों न हम ईश्वर के सहारे अपना जीवन जियें।'

इस मृत्युलोक में प्रत्येक वस्तु, जीव किसी न किसी पर आश्रित होता है। ये बात हम जानते हैं, लेकिन हम इस बात को नजरअंदाज करते रहते हैं।

ये हमारी मूर्खता को सिद्ध करता है। ईश्वर ने हमें एक दूसरे पर आश्रित रखा है, और आश्रित इसलिए रखा है कि हम ईश्वर को न भूलें। लेकिन फिर भी ये गलती दुनिया के ज्यादातर जीव, प्राणी अक्सर करते रहते हैं।

जन्म हमें माता-पिता देते हैं, जिनको ईश्वर का रूप बताया गया है। भोजन हमें प्रकृति से मिलता है प्रकृति भी ईश्वर का रूप है। ज्ञान हमें गुरूओं के माध्यम से मिलता है, गुरूओं को भी ईश्वरीय रूप ही बताया गया है। फिर हमारा अपना क्या है, जिस पर हम इतना घमंड करते हैं। दूसरों से द्वेष भाव एवं ईर्ष्या करते हैं, परधन पर नजर रखते हैं, पर स्त्री पर नजर रखते हैं। हम जरा भी बुद्धि विवेक से काम नहीं करते, हमेशा मनमानी करने की कोशिश करते रहते हैं और जब हमें ईश्वर दुख के रूप में दंडित करते हैं तो हम रुद्धन करते हैं कि ईश्वर हमें दुख दे रहा है।

तमाम शिकवे और शिकायत ईश्वर के बारे में करने लगते हैं। हम माया, मोह, लोभ और काम भावनाओं में इस कदर अन्धे हो चुके हैं कि हमें ईश्वर का दिया हुआ प्यार अथवा सुख दिखाई नहीं देता। लेकिन उसके द्वारा दिया गया कष्ट अथवा दुख दिखाई देता है, जो कि तुम्हारे पाप कर्मों के द्वारा ही मिला है।

ये सच्चाई है इसे हमें मानना पड़ेगा, इसे हमें अपनाना पड़ेगा। यदि हम इस सच्चाई को नहीं अपनाएंगे तो हमेशा ही दुखों के सागर में गोते खाते रहेंगे। इस सुन्दर जीवन को यूं ही नर्क में धकेल देंगे।

आज हमें आवश्यकता है, हम अपने बुद्धि एवं विवेक को जगाएं और एक मर्यादित ईश्वर भक्ति में लीन होकर अपने जीवन की नैया को भवसागर से पार लगाएं।

'मैं सारी दुनिया को अपना बनाना चाहता हूं,
और सारी दुनिया का होना चाहता हूं।'

उपरोक्त पंक्तियों के माध्यम से बताने एवं समझाने का प्रयास किया गया है कि अध्यात्म, धर्म और मानवता हमें सिखाती है कि हम सारी दुनिया के हैं और सारी दुनिया हमारी है। हम लोगों में, समाज में, दुनिया में प्यार बांटे, उनके काम आयें, उन्हें सही दिशा दिखायें, भावनात्मक रूप से दुनिया से जुड़ें और दुनिया को अपने साथ जोड़ें तभी हमारा जीवन सार्थक होगा।

इसके लिये हमें स्वयं में कई बदलाव करने होंगे। अपने आचार व्यवहार में, अपनी वाणी में, अपनी सोच में, अपनी दिनचर्या में अपनी शिक्षा इत्यादि। तभी हम उपरोक्त पंक्तियों पर खरे उतर सकते हैं।

जब हम निःस्वार्थ भाव से कोई कार्य करते हैं तो, दुनिया के लिये कार्य करते हैं और जब स्वार्थ भाव से किसी कार्य को करते हैं तो, समझो हम वह कार्य स्वयं के लिए कर रहे हैं।

अपने सांसारिक रिश्तों को कृतिम रिश्ते मानकर प्रभु के सामने अनाथ बनकर टेर लगाते हुए एवं प्रार्थना करते हुए।

आँख खोल सुध लीजिए, स्वामी दीनानाथ।
द्वार तेरे पे आज है, आया एक अनाथ।।

राई को पर्वत करे तू, और पर्वत को राई,
बागडोर इस जीवन की, दाता तेरे हाथ।
द्वार तेरे पे आज है, ... ।।

कुटुम्ब, कबीला, धन दौलत, चाहिए मुझे कुछ नहीं,
शरण तेरी मैं पड़ा रहुं, इतना मेरा स्वार्थ।
द्वार तेरे पे आज है, ... ।।

आ गया तेरी शरण तो, जाऊंगा वापस नहीं,
शीश नवॉकर जोड़ रहा, अपने दोनों हाथ।
द्वार तेरे पे आज है, ... ।।

नर्क दे या स्वर्ग दे तू, है गिला मुझको नहीं,
भूल मत जाना 'मदन' को, बस नाथों के नाथ।
द्वार तेरे पे आज है, ... ।।

सर्व शक्तिमान, आदि अनन्त शक्ति के आगे प्रार्थना करते हुए भक्त के मनभाव किस प्रकार के हैं, उपरोक्त पंक्तियों में बहुत ही सहज और सरल भाषा शैली में बताने का प्रयास किया गया है।

भावार्थ यह है कि अपना सब कुछ प्रभु को सौंप दिया है, निःस्वार्थ भाव से प्रभु का हो जाने की बात कही गयी है। अपने जीवन की बागडोर ईश्वर के हाथ में देकर, माया, मोह के फंदे से बंचित होकर प्रभु शरण में रहने की ही बात की गयी है। स्वर्ग, नर्क, मोक्ष, यश, अपयश की कोई इच्छा मन में नहीं पाली, सब कुछ प्रभु को समर्पित करते हुए बस इतनी विनती की है कि, हे प्रभु मुझे कुछ नहीं चाहिए। बस मेरी एक विनती है कि आप मुझे भूल मत जाना, मुझे अपनी नजरों से दूर मत करना। इस स्वार्थी संसार से मेरा कोई रिश्ता नहीं है। बस जो कुछ भी हो आप ही मेरे हो, मैं आपकी शरण में ही अपने जीवन की बची हुई सांसे समर्पित कर आपके पास सदा-सदा के लिए आना चाहता हूं। मुझपे अपनी कृपा बनाए रखना।

जो भूल हम सांसारिक जीवन में फंसकर करते हैं, वह भूल हमें हमारे प्रभु अर्थात् आदि अनन्त शक्ति, जिसका आदि है न अन्त है, से मिलने में बाधा पहुंचाती है। हम जीवन भर उस राह पर अर्थात् पथ पर चलते रहते हैं, जिसकी कोई मंजिल ही नहीं है और स्थिति उस चौराहे पर खड़े मुसाफिर की तरह होती है, जिसको ये ही नहीं पता कि मुझे जाना कहां है, उसको अपनी असली मंजिल के बारे में जानकारी ही नहीं है। वह कभी इधर जाता है कभी उधर जाता है, कोई संतोषजनक निर्णय लेने में असमर्थ रहता है। और अपने अनमोल जीवन को माया, मोह, राग, द्वेष जैसी मायावी शक्तियों में फंसकर अपने प्राणों की बलि दे देता है।

ऐसा भी नहीं है कि हमें संसार की आवश्यकता ही नहीं है, आवश्यकता है लेकिन संसार में रहकर हमें अपने जीवन को कैसे जीना है, ये सीखना जरूरी है। संसार में रहकर जीवन जीने की कला सीखने के लिए हमें एक पथप्रदर्शक अर्थात गुरू की आवश्यकता होती है, जिसके पास अनुभव होता है कि संसार में अपने जीवन की नौका को कैसे खेना है। इस माया, मोह रूपी नदी से कैसे पार होना है, भवसागर से कैसे पार होना है। यदि हमारी जीवन रूपी नौका का खेने वाला गुरू रूपी खिवैया नहीं है तो, भवसागर तो बहुत दूर की बात है, हम माया, मोह रूपी नदी को भी पार नहीं कर सकते।

गुरू के पास ही वह ज्ञान रूपी शक्ति होती है, जिसके द्वारा गुरू स्वयं तो उतर ही जाते हैं, और न जाने कितनी असंख्य जीव आत्माओं को को भी प्रभु दर्शन का अनुभव कराकर भवसागर से पार कर देते हैं। बस जरूरत है तो गुरू आज्ञापालन की, गुरूवाणी पर भरोसे और विश्वास की, गुरुवाणी को आत्मसात कर उसे जीवन में उतारने की, गुरुवाणी से प्रेरित होकर स्वयं को समझने एवं ईश्वर ध्यान में लगाने की। गुरू ही सांसारिक रिश्तों की असलियत बताकर, हमें ईश्वर से परिचय कराने का कार्य करते हैं। इसलिए कहा गया है कि माता, पिता और गुरू का ऋण हम सात जन्मों में भी नहीं उतार सकते।

आध्यात्म के मूल को समझने का प्रयास

यदि जीवन में सतगुरु यानि सच्चा गुरू मिल जाए तो फिर किसी चीज की कमी भी नहीं रहती। सतगुरु को ही ईश्वर रूप, ईश्वर से मिलाने वाला, ईश्वर से परिचय कराने वाला, सतगुरू में ही परमात्मा का दर्शन दिखता है।

वैरागी जनों ने सतगुरू को ही अपना पिया अर्थात् पति मानकर, स्वयं को पत्नी मान लिया है और सतगुरू प्रेम में इस तरह लीन हो गए कि लाज, शर्म भी त्याग दिया और सतगुरू के प्रेम में आनन्दित होकर नृत्य करते हैं। सतगुरू प्रेम के नशे के आगे दुनिया के सारे नशे तुच्छ लगते हैं। चाहे वह धन का नशा हो, चाहे तन अर्थात् यौवन का नशा हो या चाहे वह मदिरा का नशा हो।

सतगुरू प्रेम का नशा संसार में जिसको भी चढ़ा फिर कभी नहीं उतरा, बस फिर तो परमात्मा में विलीन होना ही उद्देश्य हो गया। स्वयं को सतगुरू के चरणों में समर्पित कर देना ही जीवन का लक्ष्य बन गया। हर घड़ी, आठों प्रहर बस उसका ही इन्तजार, उसके ही दर्शन की इच्छा, जैसे जल बिन मछली तड़पती है। सतगुरू के रूठने पर उनको मनाने के लिए हर सम्भव प्रयास करना। सतगुरू की विरहा में तड़पना, जागना, रोना, उदास रहना और कहना कि 'रूठे पिया तुम कब बोलोगे, और मोरा घूंघट खोलोगे।'

उपरोक्त व्याख्या को निम्न पंक्तियों के माध्यम से समझाने का प्रयास किया गया है। पाठकगण निम्न पंक्तियों के माध्यम से अध्यात्म के मूल को समझने का प्रयास करें। किसी भी चीज का निर्माण अथवा विस्तार मूल के द्वारा ही सम्भव है। बिना मूल के किसी भी चीज का निर्माण, विकास एवं विस्तार सम्भव नहीं।

चौखट बैठ निहारुं तोको

मोरे पिया तो तुम सतगुरू जी, और न दूजा कोई।
प्रीत लगाके मोने तो से, लाज शरम सब खोई ।।

बिन तुम्हरे मैं, रहूं उदासी,
अंखियां हैं, दर्शन की प्यासी,

विरहा में तुम्हरी मोरे साजन, कभी हँसी कभी रोई।
प्रीत लगाके मोने तो से, ... ।।

रूठे पिया तुम, कब बोलोगे,
और मोरा, घूंघट खोलोगे,

सोच-सोच घबराए जिया मोरा, अब मोहे धीर न होई।
प्रीत लगाके मोने तो से, ... ।।

जल बिन मछली, तड़पत जैसे,
हाल मोरा तुम, बिन है ऐसे,

चौखट बैठ निहारूं तोको, रात न पूरी सोई।
प्रीत लगाके मोने तो से, ... ।।

सबद से सुरत, जोड़ दो मोरी,
तो से अरज, करे ये गोरी,

तन, मन तो पे बारूं अपनो, तुम बिन भजन न होई।
प्रीत लगाके मोने तो से, ... ।।

उपरोक्त काव्य पंक्तियों से ज्ञात एवं सिद्ध होता है कि, गुरू एवं सतगुरू से मिलन का ये प्रथम चरण है। परमात्मा एवं आत्मा के मिलने की शुरुआत भर है, यदि आगाज ऐसा है तो अंजाम कैसा होगा। आत्मा और परमात्मा का मिलन भी एक प्रेम कहानी सरीखा ही है। जिसमें परमात्मा प्रीतम और आत्मा प्रियतम बनी हुई है।

लेकिन ये प्रेम कहानी और प्रेम सच्चा है, शुद्ध है, निर्विकार एवं दोषरहित है। जिससे किसी को हानि एवं परेशानी नहीं होती, किसी के हृदय को ठेस नहीं पहुंचती। किसी का आर्थिक, मानसिक एवं शारीरिक नुकसान नहीं होता, किसी प्रकार की मान हानि नहीं होती। बल्कि अनगिनत लाभ ही लाभ हैं।

प्रभु प्रीती से दीन और दुनिया, लोक और परलोक दोनों ही संवर जाते हैं। इसलिए अध्यात्म हमारे जीवन का मूल है। जब-जब हम अध्यात्म की ओर कदम बढ़ाते हैं, हम धार्मिक होने लगते हैं, हमारे अंदर मानवीय गुणों का संचार होने लगता है।

हमारे अंदर दूसरों की समस्याओं एवं दुख दर्द को समझकर, उनका निराकरण एवं सहयोग करने की जिज्ञासा पैदा होती है। हम सब में स्वयं को देखते हैं और स्वयं में सबको देखते हैं। हमारा नजरिया ही बदल जाता है।

किसी भी कार्य में सफल होने के लिए प्रयास करना और जिस कार्य में आप सफल होने का प्रयास कर रहे हो, उसमें सफल हो जाना दोनों का अनुभव और आनन्द अलग-अलग है। इसमें संयोग और वियोग दोनों की अनुभूति होती है।

जब हम किसी कार्य को करने का प्रयास कर रहे होते हैं वियोग की भावनाएं मन में जाग्रत होती हैं कि अमुक मंजिल पर हमें पहुंचना है। मंजिल पर पहुंचने की जिज्ञासा से मन में उत्साह बना रहता है। अपनी मंजिल के प्रति प्रेम को और बढ़ावा मिलता है। वहीं उसका दूसरा पक्ष भी है कि, अमुक मंजिल, वस्तु अथवा व्यक्ति हमें मिलेगा या नहीं, तो दुख अर्थात् वियोग की अनुभूति भी होती है। लेकिन वियोग अपनी मंजिल के प्रति प्रेम को और गहरा एवं प्रगाढ़ करता है।

लेकिन अमुक मंजिल, व्यक्ति, वस्तु जिसके लिए हम प्रयासरत थे, जब वो हमें मिल जाती है, जब हम उसके करीब पहुंच जाते हैं, जब हमारा उससे मिलन होता है, जब हम साक्षात उसको अपनी आंखों से देखते हैं, उसको छूकर जो अनुभव करते हैं, उस समय के आनन्द का वर्णन कर पाना बड़ा मुश्किल है।

हमारा रोम-रोम, हमारी सारी इन्द्रियां प्रफुल्लित हो उठते हैं और ऐसा अनुभव करते हैं कि इसके आगे शायद कुछ बचा ही नहीं है। यही संसार का अन्त है, इससे बड़ी कोई खुशी है ही नहीं। अध्यात्म में इस अनुभूति को कैसे महसूस एवं अनुभूत किया जा सकता है। निम्नलिखित पंक्तियों के माध्यम से हम समझ सकते हैं। ये एक आध्यात्मिक अनुभव है जो विरला ही देखने को मिलता है।

काटो जनम-जनम के फेरे

रात पिया के साथ मैं सोई, तन अपनो लिपटाए।
सबद से मोरी सुरत जुड़ी जब, नैना भर-भर आए।।

बोले पिया, मोरी सुरत जगाकर,
बदन तेरा है, कच्ची गागर,

है स्थूल अब, सूक्ष्म से फिर हम, कारण इसे बनाए।
रात पिया के साथ मैं सोई, ... ।।

सौंप दिया, मोने सब तुझको,
तेरे लिए, छोड़ा सब जग को,

उस पीहर, पौषाल में साजन, अब मोहे लौटा न जाए।
रात पिया के साथ मैं सोई, ... ।।

साथ में तुम्हरे, जीवन काटुं,
नाम तेरा, दिन राती राटुं ,
इन्तजार में तोरे वालमा, कितने दिन हैं बिताए।
रात पिया के साथ मैं सोई, ... ।।

हे पावन, परमात्मा मेरे,
काटो, जनम-जनम के फेरे,

'मदन' कवि हरि रस को पीकर, नए-नए भजन बनाए।
रात पिया के साथ मैं सोई, ... ।।

आत्मा, परमात्मा के मिलन की पहली रात का वर्णन कर कह रही है कि, मैं अपने को पूर्ण समर्पित कर रात अपने पति रूपी परमात्मा के साथ सोई और जब हमारा मिलन (आत्मा +परमात्मा) हुआ तो, मेरे नैंना भर आए, आँखों से अश्रुधार बहने लगी, खुशी का ठिकाना नहीं रहा, और मैं प्रभु आनन्द से गदगद हो उठी।

लेकिन इस काव्य रचना में आत्मा और परमात्मा के मिलन से पहले के सवाल एवं जवाबों का भी वर्णन किया गया है।

परमात्मा–

आत्मा को जगाकर अर्थात् ज्ञान का उपदेश देकर, कह रहे हैं कि ये जो तेरा शरीर है, कच्ची मिट्टी की गागर की भाँति है। इसमें हमें परिवर्तन कर इसको सूक्ष्म रूप देना होगा और उसके बाद कारण अर्थात् आत्मा को परमात्मा ने बताया कि शरीर के तीन रूप होते हैं। स्थूल, सूक्ष्म और कारण। यदि तुम्हें हमेशा-हमेशा के लिए हमारे साथ रहना है तो, स्थूल शरीर में हम तुम्हें स्वीकार नहीं कर सकते। इस स्थूल शरीर को हम पहले सूक्ष्म शरीर में परिवर्तित करेंगे, फिर कारण शरीर में परिवर्तित कर हमेशा-हमेशा के लिए तुम्हें अपना बना लेंगे।

आत्मा–

आत्मा परमात्मा से कह रही है कि, मैंने स्वयं को आपके चरणों में पूर्ण समर्पित कर दिया है और इस माया रूपी संसार का त्याग कर दिया है। मैं उस मृत्युलोक, लौकिक संसार में फिर से नहीं लौट सकती, ये मेरे लिए असम्भव है। अब तो मैं तुम्हारे साथ में ही अपना जीवन बिताऊंगी और तुम्हारा ही ध्यान लगाऊंगी, तुम्हारा नाम रटना ही मेरा लक्ष्य होगा। तुम से दूर होना, तुमसे जुदा होना तो असम्भव है।

हे पावन परमात्मा मैंने तुम्हें अपना पति मान लिया है। जीना-मरना साथ है, लेकिन मेरी एक इच्छा है कि मैं आवागमन के चक्कर से मुक्त होना चाहती हूं। ये जो लख चौरासी का फंदा है इससे मुझे मुक्त कर दीजिए। मैं सदा आपकी ऋणी रहूंगी। ये आपका उपकार कभी नहीं भूलूंगी। आप जग के स्वामी हो, आप आदि हो, आप अनन्त हो, आप पर जिसने भी भरोसा एवं विश्वास किया है, उसे आपने कभी निराश नहीं किया। मैं भी आपकी दासी हूं, आपके चरणों में रहकर आपको कोटि-कोटि प्रणाम करती हूं, वन्दन करती हूं।

ये अध्यात्म के मूल का उच्च कोटि का अंश है, जो काव्य के माध्यम से समझाया एवं बताया गया है। इन काव्य पंक्तियों की गहराई को जानने के लिए हमें अपनी भौतिकवादी सोच एवं विचारों से बाहर निकलना होगा। और अन्तर्मन की गहराईयों से अध्ययन कर आत्मसात करना होगा, तभी हम इसका लाभ ले सकेंगे। ये दिखावा नहीं सत्य है, और सत्य कभी दिखावा नहीं होता। वह जैसा है वैसा ही रहता है। सत्य को कृत्रिम बनाना मूर्खता है। सत्य अडिग होता है, अनमोल होता है, अटल होता है।

तमाम दार्शनिक, मनीषी ,महात्मा ,महापुरुष एवं विद्वान इस विषय पर चर्चा कर यही बताते हैं कि सत्य अध्यात्म, धर्म और मानवता का मूल है। जहां सत्य नहीं होता, वहां न तो अध्यात्म होगा, न धर्म होगा और न मानवता ही होगी। विद्वानों द्वारा कही गई ये बात सौ प्रतिशत सत्य है।

सत्य अजन्मा है, सत्य अनाम है, सत्य अजर और अमर है। सत्य था, सत्य है और सत्य रहेगा। सत्य अध्यात्म, धर्म और मानवता का ऐसा स्तम्भ है, जिस पर ये तीनों टिके हुए हैं। सत्य के स्तम्भ के बिना अध्यात्म, धर्म एवं मानवता का कोई वजूद एवं स्वरूप नहीं है। सत्य अध्यात्म, धर्म और मानवता की आत्मा है। सत्य को अध्यात्म, धर्म और मानवता की आत्मा कहना कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

जिस प्रकार शरीर झूठ है, लेकिन मृत्यु सत्य है। लेकिन ये भी सत्य है कि सत्य की कभी मृत्यु नहीं होती। इसलिए विद्वानों ने कहा है कि झूठ बार-बार मरता है, अनेकों बार मरता है। परन्तु सत्य कभी नहीं मरता। वैसे ही दुष्ट प्रवृत्ति के लोग सत्य को छुपाने की, दबाने की एवं मारने की कई बार कोशिश करते हैं, लेकिन विफल हो जाते हैं। क्योंकि मारा उसे जा सकता है, जिसकी मृत्यु होती हो, सत्य तो अमर है सत्य को तो मृत्यु आ ही नहीं सकती। इसमें तनिक भी संशय नहीं होना चाहिए।

मानव जीवन पर दुर्व्यसनों का प्रभाव

दुर्व्यसनों ने प्रत्येक युग में मानव जीवन को प्रभावित कर मानव को मानसिक रूप से कमजोर एवं अपाहिज बनाया है। जो भी इसकी चपेट में आया है, उस पर एवं उसके मन मस्तिष्क पर इसने अपना असर जरूर छोड़ा है। चाहे वह सतयुग की बात हो, त्रेतायुग की अथवा द्वापर युग की और कलयुग के तो कहने ही क्या हैं।

दुर्व्यसनों की भी मानव को अध्यात्म, धर्म और मानवता से दूर रखने में बहुत बड़ी भूमिका रही है। दुर्व्यसन मानव को सत्य की राह से भटकाते हैं, और गलत रास्तों पर चलने के लिए प्रेरित करते हैं। दुर्व्यसन मानव को अमानव बनाकर, सत्य के पथ से भटका कर कृतिम एवं बनावटी दुनिया में प्रवेश करा देते हैं। जिसका कोई वजूद नहीं होता, जो सत्यनिष्ठ नहीं होता।

दुर्व्यसनों का प्रयोग कर मानव स्वयं को वह समझने लगता है, जो वह वास्तविकता में होता नहीं है। यही उसकी सबसे बड़ी भूल है, जो उसको भ्रमित करती रहती है और उसके अनमोल एवं सुन्दर जीवन को क्षण-क्षण नष्ट करती रहती है।

दुर्व्यसनों का अधिक सेवन एवं प्रयोग मानव के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक इन सभी के सन्तुलन को प्रभावित करता है।

निम्नलिखित पंक्तियों के माध्यम से दुर्व्यसनों के परिणाम को समझाने और बताने का प्रयास किया गया है।

भीख की नौबत आय गई

पीकर के तू मदिरा मूरख, क्यों उत्पात मचाता है।
पीने से पहले फक्कड़, पीकर राजा बन जाता है।।

पीना है तो हरि अमृत पी, मदिरापान नहीं अच्छा,
करता है जो काम घिनौने, वो इंसान नहीं अच्छा,
गिर-गिरकर नाली में तू क्यों, कुल का मान घटाता है।
पीने से पहले फक्कड़, ... ।।

तू पी-पीकर मस्त हुआ, बच्चे फाके से रोते हैं,
तंग पड़ोसी हुए हैं तुझसे, नहीं चैन से सोते हैं,
कभी इसे तू, कभी उसे तू गाली खूब सुनाता है।
पीने से पहले फक्कड़, ... ।।

तिरया की तूने एक न मानी, चुटिया पकड़ घुमाई है,
बैठी तिरया चुप होके, जब उसको अकड़ दिखाई है,
तू उसको मूरख समझे है, जो तुझको समझाता है।
पीने से पहले फक्कड़, ... ।।

बेच दई जर और जमीं सब, भीख की नौबत आय गई,
जाने को हैं प्राण 'मदन' पर, तेरी आदत नाय गई।
नहीं हुई ये किसी की फिर क्यों, इससे चित्त लगाता है।
पीने से पहले फक्कड़, ... ।।

इसलिए विद्वानों ने, महापुरुषों ने, ज्ञानी एवं मनीषियों ने कहा है कि दुर्व्यसनों का पान न कर, मानव हरि के नाम का पान करे तो उसका भाग्य भी बदल जाएगा और भव से भी पार हो जाएगा। दुर्व्यसनों में लिप्त रहने वाला मानव न तो धन की कदर करता है और न ही रिश्तों की कदर करता है। वह

पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वाह भी नहीं कर पाता। न तो वह अपने बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य पर ध्यान देता है, न उनकी अच्छी परवरिश कर पाता है। बल्कि पड़ोस में रहने वाले लोगों को भला बुरा बोलता है और तंग करता है। पत्नी यदि समझाती है तो उसे एक नजर नहीं सुहाती और उसके केश पकड़कर अपने अमानव होने का पूरा परिचय देता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि दुर्व्यसन मानव को अमानव बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ते। यहां तक कि विरासत में मिली सम्पत्ति को भी वह बेचकर दुर्व्यसनों में उड़ा देता है अथवा खर्च कर देता है और एक दिन ऐसी नौबत आती है अर्थात् समय आता है कि भीख मांगकर अपनी गलत आदतों एवं इच्छाओं की पूर्ति करता है।

क्योंकि वह दुर्व्यसनों की उस हद तक पहुंच जाता है कि, जहां से वह वापस भी लौटना चाहे तो नहीं लौट सकता। क्योंकि उसके मन मस्तिष्क पर दुर्व्यसनों का राज एवं कब्जा हो जाता है।

सामाजिक शांति भंग करने में भी दुर्व्यसनों का बहुत बड़ा योगदान है। समाज में होने वाले लड़ाई झगड़े, व्यभिचार, यौन शोषण इत्यादि भी अधिकतर दुर्व्यसनों के कारण ही होते हैं। यानि कहने का तात्पर्य सीधे-सीधे यह है कि दुर्व्यसनों में लिप्त मानव से आप अध्यात्म, धर्म और मानवता की उम्मीद नहीं कर सकते। जबकि अध्यात्म, धर्म और मानवता हमारे समाज की आत्मा एवं स्तम्भ हैं। जिनके सहारे सारे समाज का सन्तुलन बनने एवं बनाने में सौ प्रतिशत मदद एवं सहयोग मिलता है।

समाज के जिम्मेदार लोग विद्वान एवं महापुरुष, सन्त, महात्मा इत्यादि दुर्व्यसन सामग्री एवं दुर्व्यसन करने वालों के बारे में अपने विचार प्रकट करते रहते हैं एवं पाबन्दी कानून लाने की भी मांग करते रहे हैं। लेकिन फिर भी इस पर लगाम लगाना बड़ा मुश्किल प्रतीत होता है।

सारांश यह है कि आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता को प्रभावित करने में दुर्व्यसनों की बहुत बड़ी भूमिका है। इसलिए हम स्वयं भी दुर्व्यसनों से दूरी बनाए रखें एवं समाज के लोगों को इससे होने वाली हानियों के बारे में बताकर उन्हें जागरूक करते रहें।

आध्यात्म, धर्म और मानवता का उद्देश्य

सबसे पहले हमें अध्यात्म, धर्म और मानवता के उद्देश्यों को समझना पड़ेगा। आखिर तीनों क्यों आवश्यक हैं। इन तीनों में से सबसे उच्च स्थान है अध्यात्म का, लेकिन इसकी पहली सीढ़ी है मानवता, अध्यात्म तक पहुंचने के लिए पहले आपको समाज द्वारा स्वीकृत मानवता के मापदंडों पर खरा उतरना होगा। उसके बाद आप जिस भी धर्म, सम्प्रदाय एवं पन्त के हैं, उसकी मर्यादाओं में रहकर अध्यात्म तक पहुंच सकते हैं। अध्यात्म को जान सकते हैं, अध्यात्म को समझ सकते हैं।

उद्देश्य-

'अध्यात्म, धर्म और मानवता का एक ही उद्देश्य है कि निर्विकार बनों।' दयालु बनों, सेवार्थी बनों, परोपकारी बनों, साहसी बनों, ईश्वरवादी बनों, स्वयं को जानों एवं पहचानों, स्वयं अच्छे बनों, दूसरों को अच्छा बनाने का प्रयास करो और इसके साथ-साथ आशावादी एवं परिश्रमशील बनों।

उपरोक्त सभी गुण अध्यात्म, धर्म एवं मानवता के उद्देश्यों को दर्शाते हैं। जिनका हमें गहन अध्ययन कर अपने निजी जीवन में अमल करना चाहिए। किसी कवि ने बहुत सुन्दर पंक्तियों के माध्यम से समझाने एवं बताने का प्रयास किया है कि-

'अमल से जिन्दगी बनती है, जन्नत भी जहन्नुम भी,
जो जैसा बनना चाहे, वैसा अमल करे।

उपरोक्त काव्य पंक्तियों का भावार्थ एवं सार यह है कि हमें अपने अनमोल जीवन को सार्थक बनाने के लिए उस ईश्वर परमपिता परमात्मा का दो घड़ी बैठकर भजन करना चाहिए अर्थात् उसको याद करना चाहिए। दुनिया की भलाई बुराई को त्याग कर इधर-उधर दौड़ना बन्द कर, अपने ज्ञान रूपी मन के दरवाजे को खोलना चाहिए।

हीरे जैसे मानव जीवन को अपने जाल में फंसाकर नष्ट करने वाले काम, क्रोध, मोह, लोभ और अहंकार पर नियंत्रण रखना चाहिए एवं इनसे बचना चाहिए। और अपने गुरू की शरण में जाकर इन पर कैसे विजय प्राप्त करनी है ये सीखना चाहिए।

अहिंसक मनोवृत्ति के साथ अपना जीवन जीने की कला सीख कर, बच्चों पर, जीवों पर, बुजुर्गों पर दया भाव दिखाते हुए अपनी वाणी को मधुर बनाकर दूसरों का सम्मान करना ही तुम्हारे जीवन का उद्देश्य होना चाहिए।

'हरि रस जिसने भी पिया है, वह युगों-युगों जिया है।'

भाषा शैली

आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता पर अपने उदगार एवं विचार लिखने में सीधी, सरल, देवनागरी हिन्दी भाषा का प्रयोग किया गया है। इसका मूल कारण यह भी है कि मेरी क्षेत्रीय भाषा एवं मातृ भाषा दोनों ही देवनागरी हिन्दी है।

किसी भी विषय पर लिखने के लिए भाषा शैली यदि सरल और ओजपूर्ण है तो, पाठक उस विषय को तन्मयता के साथ पढ़ता है। यदि अपनी बात को आप सीधी और सरल भाषा शैली में लोगों तक पहुंचाते हैं तो, ज्यादा से ज्यादा लोगों के पास आपकी बात पहुंच सकती है।

काव्य पद्यांशों में कहीं-कहीं संयोग श्रृंगार, वियोग श्रृंगार, रूपक, उपमा आदि अलंकारों का भी प्रयोग किया गया है, जो कि काव्य की आत्मा है। कई स्थानों पर सूक्तियों का, दोहे एवं छन्दों का प्रयोग भी किया गया है। ताकि जो विषय हमने चुना है, वह पाठकों के लिए रोचक एवं रस से भरा हुआ होना चाहिए।

हमारे भारत का ज्यादातर वर्ग हिन्दी भाषी है। जो हिन्दी बोलने एवं सुनने में ज्यादा रुचि रखता है। लेकिन पाठकों की मांग पर इसको अनेक भाषाओं में अनुवादित भी कराया जा सकता है।

स्वाभिमत (स्वयं का नजरिया)

किसी भी विषय पर जब आप गहन अध्ययन करते हैं तो, आपका अपना नजरिया होता है। आपके नजरिए में और दूसरों के नजरिए में कितनी समानता है, ये तो तर्क वितर्क के बाद ही पता चल पाता है। लेकिन आप जब भी किसी विषय पर शोध करते हैं तो आप अपने आप में पूर्ण स्वतन्त्र होते हैं यानि आप अपनी बात को पूरी स्वतन्त्रता के साथ कहने, बताने एवं समझाने के अधिकारी माने जाते हैं।

आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता समाज से जुड़ा मूल विषय है। जिस पर सारा समाज निर्भर होता है। आध्यात्मिकता धार्मिकता और मानवता के बगैर हमारा समाज और हम सब अपंग एवं अपाहिज की भांति हैं। सामाजिक विकास एवं मानसिक विकास के लिए आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता मेरे अनुसार अनिवार्य है। जिस प्रकार फल, दूध, दही, मक्खन, भोजन इत्यादि से शारीरिक विकास होता है, उसी प्रकार आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता से मानसिक एवं सामाजिक विकास होता है। जिसको नजरअंदाज करना, स्वयं की और समाज की मानसिक एवं सामाजिक विकास की हानि करना है। जबकि इनके दूसरे पहलु पर बात करें तो, हमें और हमारे समाज को आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता से अनगिनत यानि अनेकों लाभ हैं। जैसे :

1. सामाजिक विकास।
2. मानसिक विकास।
3. शारीरिक विकास।
4. बौद्धिक विकास।
5. धार्मिक विकास।
6. आध्यात्मिक विकास।
7. मानवीय विकास इत्यादि।

उपरोक्त लाभ हमें प्रेरित करते हैं कि हमें आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता से अपना सामंजस्य बनाकर जुड़ना चाहिए। भारत एवं विश्व में इसके लाभों के बारे में बताकर अधिक से अधिक लोगों को लाभान्वित करना चाहिए। यही सेवा आपकी सच्ची सेवा मानी जाएगी। क्योंकि नर सेवा ही नारायण सेवा होती है, ऐसा विद्वान एवं महापुरुष बताते हैं।

' प्रत्येक चीज किसी न किसी सहारे के अपना जीवन पूरा करती है,
क्यों न हम ईश्वर के सहारे अपना जीवन जियें।'

शोध सार

भौतिक सुख की प्राप्ति के लिए संघर्ष करता आज का मानव स्वयं में ही गुमराह हो गया है, अनन्त इच्छाओं की सूची बनाकर बैठा है। वह हर पल एक नए सुख की, नए भोग की तलाश में भटक रहा है। सबसे बड़ा आश्चर्य तो तब होता है, जब वह किसी की सलाह भी नहीं मानता, स्वयं को ही सब कुछ मानकर बैठा है। जो जीवन का मूल है उसे समझने का प्रयास ही नहीं कर रहा। वह भौतिक सुख सुविधाओं को ही सब कुछ मानकर बैठा है। उसके जीवन की प्राथमिकता ही भौतिक सुख है।

वह इस दुनिया की भूल भुलैया में भटककर ये भूल बैठा है कि, मैं कहां से आया हूं, इस समय कहां हूं और कहां मुझे जाना है। इन सब बातों से बेखौफ वह भौतिक सुखों की लालसा में लिप्त है। उसकी हालत शहद पर बैठी मक्खी के समान है। जो मीठा चखने के चक्कर में शहद में चिपक जाती है, उसके पंख शहद की मिठास से ऐसे हो जाते हैं, जो उड़ान भरने के काबिल नहीं रहते और आखिर मक्खी को उसी शहद के अन्दर दम तोड़ना पड़ता है। ऐसा होता क्यों है ? होता इसलिए है कि हम सबसे पहले अपने वर्तमान का लाभ देखते हैं, हमारे अन्दर धैर्य की कमी है।

दूसरी बात ये है कि हम स्वयं को दूसरों से अधिक बुद्धिमान, चतुर और चालाक समझते हैं। अपनी बात सुनाने में अधिक विश्वास रखते हैं, दूसरों की अनमोल बातों को भी नजरअंदाज कर देते हैं। हमारी इन्द्रियां भौतिक सुखों में लिप्त रहती हैं। हमारे मन मस्तिष्क पर भौतिकता का कवच चढ़ा हुआ है। जिसके कारण हम आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता से दूरी बनाए हुए हैं। जबकि हमें आवश्यकता आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता की अधिक है। यदि हमें आध्यात्मिकता, धार्मिकता और मानवता की ओर अपनी रुचि बढ़ानी है तो भौतिक सुख सुविधाओं को सीमित करना होगा अर्थात अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण रखना होगा। तभी हम सच्चे आनन्द एवं परमानन्द की प्राप्ति कर सकते हैं। अन्यथा हमारी दशा क्या होगी ये समय पर निर्भर करेगा।

आज के मानव की वर्तमान स्थिति क्या है, निम्नलिखित काव्य पंक्तियों से पता चल जाता है। वह भ्रम में जी रहा है, वह सच्चाई से दूर है, सपनों को अपना समझकर बैठा है।

एहसास

कली-कली खिल उठी
गली-गली महक उठी,
गुनगुना रहे हैं भौरे
चमचमा रहे हैं तारे,

फिर भी मन उदास है।
मुश्किलों के पास है।।

रौशनी रुलाती है
चाँदनी जलाती है,
अँधेरा ही जिन्दगी है
रोना ही वन्दगी है,

समुद्र मेरे पास है।
फिर भी मुझको प्यास है।।

बहते रहेंगे धारे
न मिलेंगे अब किनारे,
डूब जाएगी ये कश्ती
क्योंकि मौत है अब सस्ती,

तन मेरा जिन्दा लाश है।
जीने की फिर भी आस है।।

हम बहते चले जाएंगे
हम मिटते चले जाएंगे,
होगी जब वेदना
जागेगी चेतना,

सुख-दुख का इसमें वास है।
बस जिन्दगी एहसास है।।

प्रकृति अपनी यौवन अवस्था में है पक्षी, कीट-पतंगे अपनी संगीतमयी ध्वनि में गुंजार कर रहे हैं।, लेकिन हम भौतिक सुखों की लालसा में उदास बैठकर स्वयं को बिना आग के जला रहे हैं। इस परिस्थिति से हमें कौन बाहर निकाल सकता है, इस पर हम विचार करने को तैयार ही नहीं हैं। हमारा मन और मस्तिष्क आपस में मिलकर हमारे भविष्य का सत्यानाश कर रहे हैं। ऐसा क्यों हो रहा है ? क्योंकि हमारा स्वयं पर अर्थात् मन एवं मस्तिष्क पर नियंत्रण नहीं है।

हमारा मन एवं मस्तिष्क पर नियंत्रण क्यों नहीं है? हमारे मन एवं मस्तिष्क पर नियंत्रण इसलिए नहीं है, क्योंकि हमारे अंदर अहं भाव है, हम स्वयं को दूसरों से श्रेष्ठ समझते हैं। हम सुनाने में ज्यादा विश्वास रखते हैं सुनने में कम, हम किसी से सलाह नहीं लेना चाहते, किसी को गुरू एवं पथप्रदर्शक नहीं बनाना चाहते। यदि किसी को अपना गुरू एवं पथप्रदर्शक बनाते भी हैं तो, उनके बताए रास्तों पर चलने को तैयार नहीं, उनकी बातों में भी त्रुटियां ढूँढना हमारा काम रह गया है। फिर कौन हमें जीवन जीना सिखाएगा, हम भव से पार कैसे उतरेंगे, हम आनन्द और परमानन्द की प्राप्ति कैसे कर पाएंगे। इस पर हमें विचार करना होगा। सूरज की रोशनी होते ही हम भौतिक सुख साधनों में लिप्त हो जाते हैं, और जब हमारी भौतिक सुख सुविधाओं में कमी रह जाती है तो हम रोते हैं। चाँदनी रात में भी हमको सुकून नहीं मिलता, हम सैया पर पड़े-पड़े चिंता की आग में जलते रहते हैं।

हमारे पास तमाम भौतिक सुख सुविधाओं का समुद्र है, लेकिन और पाने की प्यास समाप्त नहीं हुई है, जो हमारे दुख का मूल कारण है। अपने शरीर को हमने जिन्दा लाश बना डाला है, लेकिन जीने की लालसा अभी भी है। हमारे जीवन का एक-एक दिन कम हो रहा है, इस बात का हमें ध्यान ही नहीं है। इसी तरह जीवन का अन्त आ चला, शरीर जीर्ण-क्षीण हो गया, वेदना से शरीर कराहने लगा, तब जाकर चेतना जगी। लेकिन क्या? समय निकल चुका था, क्योंकि समय ने आज तक किसी का इन्तजार नहीं किया और आगे भी नहीं करेगा। आपको ही समय की, गुरू की, महापुरुषों की, अध्यात्म की, धर्म की, मानवता की सच्चाई को समय रहते समझना होगा। नहीं तो अपने किये हुए अच्छे-बुरे कर्मों के परिणाम के मालिक आप स्वयं होंगे।

'कृत्रिम आनन्द के पीछे मत दौड़ो,
वास्तविक आनन्द की खोज करो।'

परिचय विवरण

नाम	:	डॉ. मदन मोहन शर्मा
उपनाम	:	डॉ. मदन मुरादाबादी
माता का नाम	:	स्वर्गीय श्रीमती जसबन्ती देवी
पिता का नाम	:	स्वर्गीय श्री ओम प्रकाश शर्मा
महिला / पुरुष	:	पुरुष
विवाहित /अविवाहित	:	विवाहित
पति/पत्नी का नाम	:	श्रीमती रुकमेश शर्मा
जन्म तिथि	:	25 अप्रैल, 1974
जन्म स्थान	:	ग्राम-पीलकपुर गुमानी, पोस्ट-फरीदनगर तहसील - ठाकुरद्वारा, पिनकोड-244601 जिला- मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत
शिक्षा	:	इंटरमीडिएट (विज्ञान में) स्नातकोत्तर (हिन्दी में)
चिकित्सा क्षेत्र	:	बी.ई.एम.एस., एम.डी. शास्त्रीय
गायन	:	प्राथमिक शिक्षा

आध्यात्मिकता, धार्मिकता एवं मानवता पर शोध। डॉ. नानकदास जी महाराज एवं डॉ. अभिषेक कुमार जी के मार्गदर्शन में।

संस्था	:	**DPKHRC** **"DIVYA PRERAK KAHANIYA HUMANITY RESERCH CENTRE"** **Thekma, Azamgarh, Utter Pradesh, India, Pincode - 276303**
बेवसाइट	:	**www.dpkavishek.in**

रुचि	:	साहित्य, संगीत, कला
अनुभव	:	लेखन, गायन एवं चिकित्सक के रूप में।

वर्तमान में कार्य चिकित्सक (फिजिशियन)

प्रकाशित कृतियां	:	नसीहत मैं कभी नहीं हारा यादों का सफर सफल होने की औषधियां प्रेरणा के स्रोत सफलता की कुंजी दस स्वरचित गानों की रिकार्डिंग, स्वयं के स्वर में सचिन तुम्हें सलाम (सचिन तेंदुलकर के खेल जीवन पर कविताओं का शतक)
प्रकाशाधीन कृतियां	:	हरिजाम (निर्गुण भजन संग्रह), मेरा लक्ष्य, जिया हूं देश के लिए, जियूंगा देश के लिए (भारत के वर्तमान यशस्वी माननीय प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र दामोदर दास मोदी जी के राजनैतिक जीवन पर सौ कविताओं का काव्य संग्रह)
अनुवादित कृतियां	:	कोई नहीं
संस्थापक/अध्यक्ष	:	आदर्श पब्लिकेशन एवं डायरेक्ट सेल्स सर्विस

हिन्दी प्रचार के लिए उल्लेखनीय योगदान

समय-समय पर काव्य गोष्ठी एवं सोशल मीडिया पर लाइव शो करके समूह के साथ हिन्दी लेखन पर तार्किक विश्लेषण करना ।

लेखन विधा	:	गीत, गजल, भजन, कहानी, बायोग्राफी, आलोचनात्मक लेख इत्यादि ।

शिक्षा, समाज सेवा, चिकित्सा के क्षेत्र में किया गया योगदान–

आज की युवा पीढ़ी को मीटिंग्स एवं सेमिनार के माध्यम से, अपने प्रेरक साहित्य से प्रेरित कर उनकी मानसिक स्थिति को सकारात्मक दिशा देकर देशहित में कार्य करना ।

प्राप्त सम्मान पुरुस्कार	:	कबीर कोहिनूर अवार्ड सम्मान 5 फरवरी 2023 डॉ. अम्बेडकर अंतरराष्ट्रीय केंद्र, जनपथ – 15, नई दिल्ली। शब्द गौरव सम्मान 2023, नई दिल्ली। विश्व हिन्दी गौरव सम्मान 2023 (भावना कला एवं साहित्य फाउंडेशन)
हाल का पद	:	चिकित्सक एवं संस्थापक आदर्श पब्लिकेशन, डायरेक्ट सेल्स सर्विस ।
अब प्राप्त मुख्य उपलब्धि	:	साहित्य के क्षेत्र में मिलती सफलताएं एवं शुभकामनाएं।

मेरा सपना जो अभी तक पूरा नहीं हो पाया है– हिन्दी फिल्मों में गीत लिखने का।

दुनिया को संदेश –

असम्भव बन जाए सम्भव ऐसा तू प्रयास कर।
इतिहास रच श्रम से तू अपने, ऐसा चमत्कार कर।।

वर्तमान पता–

गांव व पोस्ट–अकबरपुर,
तह. – छाता, जिला–मथुरा,
उत्तर प्रदेश, भारत, पिनकोड 281406

व्हाट्सप नम्बर	:	9213918593
मोबाईल नम्बर	:	9213918593
ईमेल	:	mmsharma2021@gmail.com

-डॉ. मदन मोहन शर्मा

मूल्य : 250/-